ऋग्वेद यजुर्वेद

vk3e

पवमान

(मासिक)

मूल्यः ` 15

वर्ष : 27 | चैत्र-बैसाख | वि0स0 2072 | अप्रैल 2015 | अंक : 04

मुद्रकः सरस्वती प्रेस, देहरादून वजनः 50 ग्राम

पं. गुरुदत्त विद्यार्थी
(1864–1890)

151 वीं जयंती 26 अप्रैल 2015

वैदिक साधन आश्रम तपोवन, नालापानी, देहरादून-248008

सामवेद अथर्ववेद

वैदिक साधन आश्रम, तपोवन

नालापानी, देहरादून - 248008, दूरभाषः 0135-2787001

ग्रीष्मोत्सव (सामवेद परायण यज्ञ एवं योग साधना शिविर)
ज्येष्ठ कृष्ण पक्ष द्वितीया से ज्येष्ठ कृष्ण पक्ष षष्ठी विक्रमी सम्वत् 2072 तक
तद्नुसार बुधवार 6 मई से रविवार 10 मई 2015 तक मनाया जायेगा।

यज्ञ के ब्रह्मा एवं योग साधना निदेशक : स्वामी दिव्यानन्द सरस्वती जी महाराज

प्रवचनकर्ता	:	आचार्य उमेश चन्द कुलश्रेष्ठ वैदिक प्रवक्ता आगरा एवं आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य
वेद पाठ	:	महर्षि दयानन्द आर्ष ज्योतिर्मठ गुरूकुल पौंधा देहरादून के ब्रह्मचारियों द्वारा
यज्ञ के संयोजक	:	श्री उत्तम मुनिः जी।
भजनोपदेशक	:	पण्डित उदयवीर सिंह आर्य

बुधवार 6 मई से रविवार 10 मई 2015 तक प्रतिदिन

योग साधना	प्रातः 5.00 बजे से 6.00 बजे तक	यज्ञ	सायं 3.30 बजे से 5.15 तक
यज्ञ	प्रातः 6.30 बजे से 8.15 बजे तक	भजन एवं प्रवचन	सायं 5.15 बजे से 6.30 तक
भजन एवं प्रवचन	प्रातः 8.15 बजे से 9.30 बजे तक	शंका समाधान	रात्रि 8.30 बजे से 9.30 तक

ध्वजारोहण	बुधवार 6 मई 2015 को प्रातः 9:30 बजे।
गायत्री यज्ञ	बुधवार 6 मई 2015 को प्रातः 10 से 12 बजे तक
युवा सम्मेलन	गुरूवार 7 मई 2015 को प्रातः 10:30 बजे से 12:30 बजे तक
विषय	स्वाइन फ्लू- कारण, निवारण एवं जन जागृति के उपाय
उद्बोधन	आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य एवं आचार्य डॉ. धनन्जय जी
महिला सम्मेलन	शुक्रवार 8 मई 2015 को मध्याह्न 1 बजे से 3:30 बजे तक
संयोजिका	श्रीमती सन्तोष रहेजा जी (दिल्ली)
उद्बोधन	डॉ. अन्नपूर्णा, डॉ. सुखदा सोलंकी, डॉ. मंजु नारंग, श्रीमती सुरेन्द्र अरोड़ा एवं श्रीमती सरोज आर्या जी आदि
विषय	नारी शोषण- विश्वव्यापी समस्या के व्यावहारिक एवं श्रेष्ठ समाधान
शोभायात्रा	शनिवार 9 मई 2015 को प्रातः 10 बजे तपोभूमि के लिये शोभायात्रा जायेगी
संयोजक	श्री मंजीत सिंह जी
भजन संध्या	शनिवार 9 मई 2015 को रात्रि 8 बजे से 10 बजे तक
पूर्णाहुति एवं ऋषिलंगर	रविवार 10 मई 2015 को यज्ञ की पूर्णाहुति, भजन प्रवचन एवं ऋषिलंगर

बस सेवाः रेलवे स्टेशन से तपोवन आश्रम नालापानी के लिए हर समय बस उपलब्ध रहती है।

सप्रेम आमंत्रण

आदरणीय महोदय/महोदया, स्व. बाबा गुरुमुख सिंह जी एवं पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती जी, स्वामी योगेश्वरानन्द जी परमहंस एवं महात्मा प्रभु आश्रित जी ने तपोवन आश्रम को साधना के लिए सर्वश्रेष्ठ स्थान माना था। आपसे प्रार्थना है कि परिवार व ईष्ट मित्रों सहित यज्ञ एवं सत्संग में उपस्थित होकर हमें कृतार्थ करें एवं अपने-अपने समाज/धार्मिक सत्संगों से यह निमंत्रण हमारी ओर से निवेदित करने की कृपा करें। आपके उदार सहयोग के लिए अग्रिम धन्यवाद।

निवेदक

दर्शन कुमार अग्निहोत्री, ई. प्रेम प्रकाश शर्मा, सन्तोष रहेजा, सुधीर कुमार माटा, मंजीत सिंह, विक्रम बावा, योगेश मुंजाल, डॉ. शशि वर्मा, मनीष बावा, महेन्द्र सिंह चौहान, गोपाल कृष्ण हांडा, विजय कुमार, रामभज मदान

एवं समस्त सदस्य, वैदिक साधन आश्रम सोसायटी

ओ3म्

पवमान

वर्ष–27 अंक–4

चैत्र–बैसाख 2072 विक्रमी अप्रैल 2015

सृष्टि संवत् 1,96,08,53,115 दयानन्दाब्द : 190

★

–: संरक्षक :–

स्वामी दिव्यानन्द सरस्वती

★

–: अध्यक्ष :–

श्री दर्शनकुमार अग्निहोत्री

मो. : 09810033799

★

–: सचिव :–

प्रेम प्रकाश शर्मा

मो. : 9412051586

★

–: आद्य सम्पादक :–

स्व0 श्री देवदत्त बाली

★

–: मुख्य सम्पादक :–

कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री

अवैतनिक

मो. : 08755696028

★

–: सम्पादक मण्डल :–

अवैतनिक

आचार्य आशीष दर्शनाचार्य

मनमोहन कुमार आर्य

★

–: कार्यालय :–

वैदिक साधन आश्रम, तपोवन,

तपोवन मार्ग, देहरादून–248008

दूरभाष : 0135–2787001

Email : vaidicsadanashram88@gmail.com

Web-www.vaidicsadhanashramdehradun

विषयानुक्रम

सम्पादकीय	कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री	2
वेदामृत	स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती	3
आर्य समाज गौरव		4
वेदों की भाषा सब भाषाओं की....	कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री	5–7
छोटी आयु में बड़े धार्मिक काम	मनमोहन कुमार आर्य	8–10
सत्संग का महत्व	आचार्य भगवान देव चैतन्य	11–12
सदैव आनन्द से रहो	स्व० धर्ममुनि परिव्राजक	13
गुरु का प्रसाद	डा० सुधीर कुमार आर्य	14
सच्चा मानव धर्म	श्रीमती पुष्पलता सक्सेना	15–16
आधुनिक संदर्भ में विद्या की महत्ता	कुंवर भुवनेन्द्र सिंह	18–20
जो यज्ञ नहीं करता पाप करता है	मनमोहन कुमार आर्य	21–23
युवाओं हेतु शिविर		24
पुनर्नवा		25–26
आगामी महिनों में आयोजित कार्यक्रम		26
आरोग्य का खजाना नीम	डा० बनवारी लाल यादव	27–28
प्रभु दर्शन	महात्मा प्रभु आश्रित जी	29–31
दानदाताओं की सूची		32

पत्रिका का शुल्क : वार्षिक रु 150 : एक प्रति मूल्य : रु 15 : पन्द्रह वर्ष हेतु : रु 1500 पवमान पत्रिका का शुल्क/ दानराशि कैनरा बैंक, क्लाक टावर, देहरादून (IFSC code : CNFB0002162) के खाता 'वैदिक साधन आश्रम' खाता सं. 2162101021169 में जमा करा सकते हैं।

पवमान में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार सम्बन्धित लेखक के हैं। सम्पादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है। किसी भी विवाद के प्रतिवाद हेतु न्यायक्षेत्र देहरादून ही होगा। आपत्ति की अवधि प्रकाशन तिथि से एक माह के भीतर ही मानी जायेगी।

पवमान पत्रिका में विज्ञापन के रेट्स

1.	कलर्ड फुल पेज	रु. 5000/– प्रति माह
2.	ब्लैक एण्ड व्हाईट फुल पेज	रु. 2000/– प्रति माह
2.	ब्लैक एण्ड व्हाईट हॉफ पेज	रु. 1000/– प्रति माह

सम्पादकीय

महानता

किसी भी व्यक्ति की महानता को आंकने के लिए प्रत्येक समाज या विचारधारा के अलग–अलग पैमाने होते हैं। इन्हीं के आधार पर अशोक, अकबर और सिकन्दर आदि को महान कहा गया है। वेदों में महानता के पांच लक्षण बताये गये हैं। प्रथम लक्षण है व्यक्ति का कर्मयोगी होते हुए परमेश्वर, समाज और राष्ट्र के लिए जीवन समर्पित करना। उसका दूसरा लक्षण है कि वह मान–अपमान, लाभ–हानि, आदि की परवाह न करते हुए और सदा आनन्दित रहते हुए अपने कर्तव्य पथ पर आगे बढ़ता रहता है। वह दूसरों को भी आनन्द प्रदान करता है। उसका तीसरा लक्षण यह है कि वह मननशील, सहनशील और मर्यादा पालक होता है। उसका धर्म मनुष्यता या परोपकारिता होता है। गीता की भाषा में निष्काम कर्म करने वाला अर्थात् अपने लाभ के लिए कर्म न करने वाला व्यक्ति महानता के लक्षण पूरे करता है। चौथा लक्षण यह है कि उसमें क्षुद्रता अर्थात् छोटापन नहीं होता है। उसका हृदय विशाल होता है और वह प्रत्येक जीव को समान आदर और प्रेम की दृष्टि से देखता है। महानता का पाँचवा लक्षण यह है कि वह स्वयं प्रकाशित होता है और अपने इस प्रकाश से अन्यों को भी प्रकाशित करता है अर्थात वह ज्ञान और ऊर्जा से परिपूर्ण होता और अन्यों को भी प्रेरित करता है जिससे वे भी अपना अज्ञान मिटाकर कर्मशील होकर ज्ञानमार्ग पर बढ़ सकते हैं। सदैव दूसरों की सहायता करने वाला, विकार रहित, पुरुषार्थयुक्त, उत्तम बल से युक्त, बुद्धिमान्, विशेष ज्ञान वाला और बिना किसी स्वार्थ के सेवा में तत्पर रहने आदि गुणों से सुशोभित होना भी महानता के लक्षण हैं।

महान व्यक्तियो के कर्म और स्वभाव को समझ कर यदि हम आत्मसात कर सकें तो अपने जीवन में कुछ सुधार ला सकते हैं। आज तक इस धरती पर जितने भी कर्मशील लोग पैदा हुए हैं, सभी ने अपने–अपने तरीके से कुछ रचनात्मक योगदान दिया है। इस सृष्टि को इन विचारकों, मनीषियों, और वैज्ञानिकों आदि ने समस्याओं का समाधान करते हुए समृद्ध बनाया है। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने एक शैव भक्त के परिवार में जन्म लिया था। उनके पिता की आर्थिक स्थिति भी अच्छी थी। वे चाहते तो एक सामान्य सुखी जीवन बिता सकते थे परन्तु उनके मन में बचपन में ही सच्चे शिव की खोज करने का विचार आया और इक्कीस वर्ष की आयु में वे सब सुखों को त्याग कर कर्तव्य पथ पर चल पड़े। विरजानन्द के रूप में उन्हें एक सच्चे गुरु मिले। इस गुरु शिष्य के मिलन से उनके जीवन में परिवर्तन आया और वे व्याकरण, वेद, वेदांग और भारतीय दर्शन के प्रकाण्ड विद्वान् बने। उन्होंने गुरु आज्ञा को शिरोधार्य कर वेद व आर्ष ग्रन्थों के प्रचार, कुरीतियों के निवारण और दीन–हीनों के उद्धार के लिए अपना जीवन समर्पित कर दिया। उनके जीवन से भी यही शिक्षा मिलती है कि व्यक्ति कर्मों से ही महानता प्राप्त कर सकता है। ऐसे ही एक कर्मयोगी पं. गुरुदत्त विद्यार्थी थे। वे महर्षि के देहावसान के समय के अन्तिम क्षणों के प्रत्यक्ष गवाह थे जिसका उन पर भी अत्यन्त प्रभाव पड़ा था और न केवल वे आस्तिक बने अपितु महर्षि की वैदिक धर्म की मशाल के मुख्य वाहक कहलाये। उनका जन्म माह अप्रैल में ही 26 तारीख को हुआ था। उन्हें हम विनम्र श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं।

कृष्णकान्त वैदिक शास्त्री

वेदामृत

चार वेद

स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती

तस्माद्यात्सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे।
छन्दाꣳसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत।।

शब्दार्थ– (तस्मात्) उस (सर्वहुतः) सर्वदाता (यज्ञात्) पूजनीय, सर्वोपास्य परमेश्वर से (ऋचः) ऋचाऐं, ऋग्वेद (सामानि) सामवेद (जज्ञिरे) उत्पन्न हुआ। (तस्मात्) उस परमेश्वर से ही (छन्दांसि) छन्द, अथर्ववेद (जज्ञिरे) उत्पन्न हुआ। (तस्मात्) उसी जगदीश्वर से (यजुः) यजुर्वेद (अजायत) प्रकट हुआ।

भावार्थ– यह मन्त्र पुरुष–सूक्त का है। इस अध्याय में यज्ञ शब्द पुरुष का पर्यायवाची है। पुरुष का अर्थ है पूर्ण परमेश्वर। यज्ञ का अर्थ हुआ पूजनीय परमेश्वर।

जब सृष्टि–रूपी यज्ञ प्रारम्भ हुआ तब परमेश्वर ने मनुष्यमात्र के कल्याण के लिए चारों वेदों का ज्ञान दिया। उस यज्ञपुरूष से ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद– ये चार वेद प्रकट हुए।

पाश्चात्य विद्वान कहते हैं कि अथर्ववेद पीछे से बनाया गया परन्तु उक्त मन्त्र से इस निराधार कल्पना का खण्डन हो जाता है। प्रभु ने सर्गारम्भ में ही चार ऋषियों को चार वेदों का ज्ञान दिया था।

वेदों में अन्यत्र भी अनेक स्थानों पर चारों वेदों का वर्णन मिलता है। अतः 'छन्दांसि' का अर्थ अथर्ववेद ही ठीक है। यहां 'छन्दांसि' विशेषण नहीं है।

आर्य समाज गौरव–श्री रक्षित अग्रवाल

श्री रक्षित अग्रवाल जी ने आईआईएम अहमदाबाद में सर्वोच्च स्थान प्राप्त करके अपने परिवार सहित मित्र–बंधुओं व आर्यसमाज को गौरवान्वित किया है। इससे पूर्व भी आपने आईआईटी मद्रास में इलेक्ट्रिकल इंजीनियरिंग ब्राँच में सर्वोच्च स्थान प्राप्त करके ''इंस्टिट्यूट मेरिट प्राइज'' प्राप्त किया था। अपनी पूज्या माता श्रीमती सविता जी अग्रवाल के संरक्षण में आपको बचपन से ही आर्यसमाज के संस्कार प्राप्त हुए व आपको अपने बाल्यकाल में ही हवन व सँध्या के मन्त्र स्मरण हो गए थे। आपने वैदिक सिद्धांतों को दर्शन योग महाविद्यालय, रोजड़ में बच्चों के लिए आयोजित कई शिविरों में बाल्यकाल में ही भाग लेकर दृढ़ कर लिया था। वैदिक साधन आश्रम, तपोवन, देहरादून आपके उत्तम स्वास्थ्य व मंगलमय उज्जवल भविष्य की कामना करता है तथा आशा करता है कि आप अपने विशिष्ट संस्कारों व योग्यता से वैदिक सिद्धांतों व जीवन शैली को युवाओं तक पहुँचाने में अपना अनुपम योगदान देंगे।

वेदों की भाषा सब भाषाओं की जननी है

–कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री

'धर्म' शब्द धृञ् धारणे धातु से 'मन' प्रत्यय करके निष्पन्न होता है। इसका अर्थ है–धारण, पोषण और रक्षा करना। इसलिए जो धारण किया जाता है, वह धर्म है। वैशेषिक दर्शन में महर्षि कणाद कहते हैं– 'यतोऽभ्युदयनिःश्रेयससिद्धिः स धर्मः' अर्थात् जिन कर्मों का अनुष्ठान करने से मनुष्य जीवन का अभ्युदय हो और अन्त में निःश्रेयस की प्राप्ति हो वह धर्म है। ऋग्वेद के मन्त्र में कहा गया है–

'त्रीणि पदा विचक्रमे विष्णुर्गोपा अदाभ्यः।
अतो धर्माणि धारयन्'।। (01/22/18)

अर्थात् कभी विनाश को न प्राप्त होने वाला, जगत् का रक्षक परमेश्वर समस्त धर्मों को धारण करता हुआ तीनों प्रकार के जानने योग्य और प्राप्त होने योग्य पदार्थों को इस मूल कारण से ही विविध रूपों में बनाता है। मनुस्मृति में कहा गया है–

एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः।।

अर्थात् इसी ब्रह्मवर्त्त देश में उत्पन्न हुए विद्वानों के सानिध्य से पृथ्वी पर रहने वाले सब मनुष्य अपने–अपने आचरण अर्थात् कर्त्तव्यों की शिक्षा ग्रहण करें। मनुस्मृति में धर्म के धृति, क्षमा आदि दस लक्षण बताए गए हैं। यदि मनुष्य इन पर आचरण करते हुए जीवन बिताये तो सारे विश्व में शान्तिमय वातावरण पैदा कर समस्त मानव जाति को सुखी बनाया जा सकता है। चाणक्य के अनुसार सुख का मूल धर्म है, धर्म का मूल अर्थ है, अर्थ का मूल राज्य है, राज्य का मूल इन्द्रिय–जय है। इन्द्रिय–जय या संयम के बिना कोई राज्य सुरक्षित नहीं रह सकता है। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अपने कालजयी ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में कहा है– 'कहने सुनने–सुनाने, पढ़ने–पढ़ाने का फल यही है कि जो वेद और वेदानुकूल स्मृतियों में प्रतिपादित धर्म का आचरण करना। इसलिए धर्माचार में सदा युक्त रहे।' इसी ग्रन्थ में यह भी कहा गया है– 'जो सत्य–भाषणादि कर्मों का आचरण करना है, वही वेद और स्मृति में कहा हुआ आचार है।' इस प्रकार धर्माचरण से ही धर्म की प्राप्ति, सिद्धि एवं अभिवृद्धि देखकर मुनियों ने सब तपस्याओं का श्रेष्ठ मूल आधार धर्माचरण को ही स्वीकार किया है। वेदों के उपदेशों का सार ही उपनिषदों और आरण्यकों में दिया गया है। तैत्तिरीय उपनिषद् को तो एक प्रकार से नैतिक शिक्षा का भण्डार ही कह सकते हैं। इसके एकादश अनुवाक में वेद–विद्या पढ़ा चुकने के बाद आचार्य अन्तेवासी शिष्य को दीक्षान्त–भाषण में उपदेश देता है – सत्य बोलना। धर्माचरण करना। स्वाध्याय से प्रमाद मत करना। आचार्य को जो प्रिय हो वह दक्षिणा मे उसे देकर ब्रह्मचर्याश्रम के अनन्तर गृहस्थाश्रम में प्रवेश करना और प्रजा के सूत्र को मत तोड़ना। सत्य बोलने से प्रमाद न करना, जिस बात से तुम्हारा भला हो उससे प्रमाद मत करना। अपनी विभूति बढ़ाने में प्रमाद मत करना। स्वाध्याय और प्रवचन में प्रमाद मत करना। माता, पिता, आचार्य और अतिथि को देव मानने का उपदेश किया गया है। विद्वानों के उपदेशों को ध्यान से सुनने और किसी विवाद में न पड़ने को कहा गया है।

नीति का अर्थ है मनुष्य के जीवन के लक्ष्य को प्राप्त करने के साधन–रूप नियम, जिन पर चल कर इस जीवन और परलोक (पुनर्जन्म) में कल्याण की प्राप्ति हो। आचार शिक्षा का सम्बन्ध व्यक्तिगत जीवन से है,

जिसमें आत्मोन्नति पर बल दिया गया है। नैतिक शिक्षा में व्यक्ति के आचार–विचार की शुद्धि के साथ ही पारिवारिक, सामाजिक, राष्ट्रीय, वैश्विक और प्राणि मात्र से सम्बन्धित विषयों पर विचार किया जाता है। मनुष्य अपने–पराये, सजातीय–विजातीय, शत्रु–मित्र, परिचित–अपरिचित, आदि से किस प्रकार का व्यवहार करे यह नैतिक शिक्षा बताती है। इसके द्वारा समाज के प्रत्येक व्यक्ति का वास्तविक कल्याण होता है। नैतिक शिक्षा का मूल वेदों में मिलता है। 'सर्वं वेदात् प्रसिध्यति'– इस भारतीय सिद्धान्त से ज्ञात होता है कि अपौरुषेय वेदों से ही समस्त विद्याएं प्रादुर्भूत हुई हैं। वेदों में विधि और निषेध अर्थात् मनुष्यों के कर्तव्य और अकर्तव्य कर्म वर्णित हैं। वेदों के साथ ही ब्राह्मण ग्रन्थ, उपनिषद्, गीता, महाभारत, रामायण, पंचतन्त्र, विदुर, शुक्र, भर्तृहरि, आदि ऋषियों के नीति ग्रन्थों में इनका विस्तृत वर्णन है।

जिससे अभ्युदय धारण हो वह धर्म है और इस अभ्युदय को प्राप्त करने के लिए जो उपाय हैं वे नीति कहलाते हैं, इस प्रकार देखा जाये तो दोनों का एक ही अर्थ होता है। कुछ लोग लौकिक अभ्युदय को प्राप्त करने के साधन को 'नीति' और पारलौकिक साधन को धर्म कहते हैं। नीति या नैतिकता से ही शास्त्र और धर्म प्रतिष्ठित होते हैं। नैतिकता के अभाव में शास्त्र और धर्म नष्ट हो जाते हैं। धर्मविहीन नैतिकता का कोई औचित्य नहीं है, भले ही यह आरम्भ में कुछ चमत्कारिक सफलता दिला दे परन्तु अन्ततोगत्वा वह पतन की ओर ही ले जायेगी। मनुस्मृति में कहा गया है– 'धर्मो रक्षति रक्षितः' अर्थात् हमारे जीवन में जो स्वाभाविक धर्म और संयम रहता है, वह हमारी रक्षा करता है और जो हम धर्मपूर्वक आचरण या सदाचार करते हैं, वह धर्म हमारी रक्षा करता है। नीति या नैतिकता का मूल ही सदाचार है। धर्म की दृष्टि से नैतिकता के चार पाद हैं–सत्य, तप, दया और पवित्रता। इनमें सत्य को सर्वोपरि माना गया है। सामवेद में कहा गया है–'स्तुहि सत्यधर्माणाम्' अर्थात् सत्यनिष्ठ की प्रशंसा करे। मुण्डकोपनिष्द् में कहा गया है–

सत्यमेव जयति नानृतं सत्येन पन्था वितो देवयानः।
येनाक्रमन्त्यृशयो ह्याप्तकामा यत्र तत्सत्यस्य परमं निधानम्।।

अर्थात् सत्य की विजय होती है, असत्य की नहीं। सत्य धाम में गमन करते हैं जहां सत्य का वह परम आश्रय परमात्मा अनावृत रूप से स्थित है। तप का अर्थ है– पीड़ा सहना, घोर कड़ी साधना करना, मन का संयम रखना आदि। महर्षि दयानन्द के अनुसार ''जिस प्रकार सोने को अग्नि में डालकर इसका मल दूर किया जाता है उसी प्रकार सद्गुणों और उत्तम आचरणों से अपने हृदय, मन और आत्मा के मैल को दूर किया जाना तप है। गीता में तप तीन प्रकार के बताए गए हैं– शारीरिक, जो शरीर से किया जाये। वाचिक, जो वाणी से किया जाये और मानसिक, जो मन से किया जाये। देवताओं, गुरूओं और विद्वानों की पूजा अर्थात यथा योग्य सेवा और सुश्रूषा करना, ब्रह्मचर्य और अहिंसा शारीरिक तप हैं। ब्रह्मचर्य का अर्थ हैः शरीर के बीजभूत भाग तत्त्व की रक्षा करना और ब्रह्म में विचरना या अपने को सदा परमात्मा की गोद में महसूस करना। किसी को मन, वाणी और शरीर से हानि न पहुंचाना अहिंसा है। हिंसा और अहिंसा केवल शारीरिक ही नहीं अपितु वाचिक और मानसिक भी होती हैं। वाणी के तप से अभिप्राय हैः ऐसी वाणी बोलना जिससे किसी को हानि न पहुंचे। सत्य, प्रिय और हितकारक वाणी का प्रयोग करना चाहिए। वाणी के तप के साथ ही स्वाध्याय की बात भी कही गई है। वेद, उपनिषद आदि सद्ग्रन्थों का नित्य पाठ करना और अपने द्वारा किये जा रहे नित्य कर्मों पर भी विचार करना स्वाध्याय है। मन को प्रशन्न रखना, सौम्यता, मौन, आत्मसंयम और चित्त की शुद्धभावना यह

सब मन का तप है। मनु कहते हैं कि तप से मन का मैल दूर होता है और पाप का नाश होता है। शास्त्र कहते हैं कि अपने को ऊपर उठाना है तो तपस्वी बनो। अथर्ववेद में कहा गया है–ब्रह्मचर्येण तपसा राजा राष्ट्रं वि रक्षति' अर्थात् ब्रह्मचर्य एवं तप से राजा विविध प्रकार से राष्ट्र की रक्षा करता है। दया की महिमा भी नैतिक कृत्यों के रूप में शास्त्रों में सर्वत्र मिलती है। तुलसीदास कहते हैं–

दया धर्म का मूल है, पाप मूल अभिमान।
तुलसी दया न छोड़िये जब लौं घट में प्राण।।

मनुष्यों को न केवल शरीर अपितु मन, बुद्धि और आत्मा को भी पवित्र रखना चाहिए। मनुस्मृति में कहा गया है–

अद्भिर्गात्राणि शुद्ध्यन्ति मनः सत्येन शुद्ध्यति।
विद्यातपोभ्यां भूतात्मा बुद्धिर्ज्ञानेन शुद्ध्यति।।

अर्थात् जल से शरीर के बाहरी अवयव, सत्याचरण से मन, विद्या और तप से जीवात्मा और ज्ञान या विवेक से बुद्धि निश्चित रूप से पवित्र होती है। मानव–जीवन में जो कुछ श्रेष्ठ और नैतिकतापूर्ण है, उसके पीछे विवेक विद्यमान होता है। नीति बोध से जब धर्म का उदय होता है तो मनुष्य अपनी अपूर्णता के प्रति जागरूक हो जाता है। व्यक्तित्व का आध्यात्मिक विकास दिव्य जीवन का शिलान्यास है जो नीतिबोध पर निर्भर रहता है। नीतिबोध की सार्थकता भी दिव्य जीवन की ओर अग्रसर होने में ही है।

सम्पूर्ण विश्व में भारत जैसे धर्माधारित नैतिक मूल्यों का विशाल भण्डार नहीं है और न ही आज की ज्वलन्त समस्याओं को दूर करने हेतु कोई दूसरा मार्ग है। केवल वैदिक सनातन नैतिक पद्धतियों से ही विश्व का कल्याण सम्भव है। यदि अपने नैतिक मूल्यों को सुरक्षित रखना है तो हमें उपरोक्त शास्त्रों से प्रेरणा लेनी होगी। सबसे पहले स्वयं को सुधारते हुए सत्य, प्रेम, दया, अहिंसा, निरव्यसन, जितेन्द्रियता, अक्रोध, अलोभ, परोपकारिता आदि सद्गुणों को अपनाना होगा। नैतिकता के प्रारम्भिक संस्कार माता की गोद से ही बनते हैं। माता की शिक्षा, उसके आदर्श संस्कार और घर का वातावरण बच्चों के कोमल मन का विकास करने में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। माता–पिता और आचार्य बालक/बालिकाओं के आदि गुरु होते हैं, वे इन आदर्शों को संस्कार रूप में बच्चें में स्थापित करें क्योंकि मनुष्य जीवन की विकासधारा उसके शैशव–कालीन अनुभवों से निर्धारित मार्ग का ही अनुसरण करती है। धर्म, संस्कृति और इतिहास से बच्चों को उपदेशात्मक कथाएं सिखलायी जानी चाहिएं जिससे उनमें ईश्वर भक्ति और समर्पण की भावना आएं। इस प्रकार की शिक्षा से युवा पीढ़ी में मनसा–वाचा–कर्मणा सत्यप्रवृत्तियों का विकास हो सकेगा। यह उनके चरित्र निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा और उनमें सत्य, दया, त्याग, तप, विनय, न्याय प्रियता और राष्ट्र प्रेम आदि के गुण विकसित होंगे। प्राचीन परम्परागत नैतिक मूल्यों को पुनर्स्थापित करके ही हम विश्व में एक आदर्श और समृद्ध समाज का निर्माण कर सकते हैं।

सौजन्य से-
द हेरीटेज स्कूल
14/6 न्यू रोड, देहरादून

जीवन मिलना भाग्य की बात है। मृत्यु होना समय की बात है।
मृत्यु के बाद भी हम लोगों के मन में जीवित रहें, यह कर्मों की बात है।

151 वीं जयन्ती 26 अप्रैल पर

छोटी आयु में बड़े धार्मिक काम करने वाले अमर मनीशी पं. गुरूदत्त विद्यार्थी

– मनमोहन कुमार आर्य

महर्षि दयानन्द के साक्षात् शिष्यों में प्रथम व यशस्वी शिष्य पं. गुरूदत्त विद्यार्थी का जन्म 26 अप्रैल, 1864 ई. को अविभाजित भारत के पश्चिमी पंजाब राज्य के मुलतान नगर में हुआ था। महर्षि दयानन्द के जीवनकाल 1825–1883 में देश भर के अनेक लोग उनके सम्पर्क में आये जिनमें से कई व्यक्तियों को उनका शिष्य कहा जा सकता है परन्तु सभी शिष्यों में पं. गुरूदत्त विद्यार्थी उनके अनुपम व अन्यतम शिष्य थे। आपके पिता लाला रामकृष्ण जी फारसी भाषा के असाधारण विद्वान् थे तथा राजकीय सेवा में अध्यापक थे। आपकी शिक्षा उर्दू और अंग्रेजी में मुलतान व लाहौर में सम्पन्न हुई थी। जन्म से ही आप अत्यन्त मेधावी थे और वैरागी प्रकृति के थे। विद्यार्थी जीवन व युवावस्था में पुस्तकों को पढ़ने में आपकी सर्वाधिक रुचि वा लगन थी। जो भी पुस्तक हाथ में आती थी उसे आप अल्प समय में ही आद्योपान्त पढ़ डालते थे। बचपन में ही आपने उर्दू व अंग्रेजी के प्रसिद्ध विद्वानों के ग्रन्थों को पढ़ लिया था। उर्दू में आप कविता भी कर लेते थे। विज्ञान आपका प्रिय विषय था। पाश्चात्य वैज्ञानिकों की तरह ही आप नास्तिक तो नहीं परन्तु ईश्वर के अस्तित्व के प्रति संशयवादी अवश्य हो गये थे। लाहौर स्थित देश के सुप्रसिद्ध गवर्नमेंट कालेज के आप सबसे अधिक मेधावी व योग्यतम विद्यार्थी थे तथा अपनी कक्षा में सर्वप्रथम रहा करते थे। विज्ञान में एम.ए. की परीक्षा में भी आप पूरे पंजाब में सर्वप्रथम रहे थे। उन दिनों पंजाब में सारा पाकिस्तान एवं दिल्ली तक भारत के अनेक भाग सम्मिलित थे। यद्यपि आप व्यायाम आदि करते थे और स्वास्थ्य का ध्यान भी रखते थे परन्तु पढ़ने का शौक ऐसा था कि इस कारण से आप असावधानी कर बैठते थे। 26 वर्ष की आयु पूरी होने से एक सप्ताह पूर्व ही आपका देहान्त हो गया था। इस कम आयु में भी आपने देश, धर्म, समाज हित के अनेक प्रशंसनीय व अविस्मरणीय कार्य किए जिससे आपको भविष्य में याद किया जाता रहेगा। आपने महर्षि दयानन्द के बाद स्वयं को उन जैसा बनाने का प्रयास किया था। वैदिक विद्याओं एवं वैदिक धर्म के प्रचार–प्रसार में आपकी भी वही भावना थी और वैसा ही उत्साह था जैसा कि महर्षि दयानन्द में देखने को मिलता था। इसलिए सभी मित्र और निकट सहयोगी आपको वैदिक धर्म का सच्चा विद्वान् व नेता स्वीकार करते थे। पं. गुरुदत्त विद्यार्थी को इस बात का श्रेय प्राप्त था कि उन्होंने महर्षि दयानन्द के न केवल दर्शन ही किए थे अपितु 30 अक्तूबर, 1883 ई. को अजमेर में उनकी मृत्यु के दृश्य को प्रत्यक्ष रूप से देखा था। उन दिनों आप ईश्वर के अस्तित्व के प्रति संशयवादी थे। मृत्यु के समय जिन शारीरिक कष्टों से महर्षि दयानन्द का सामना हुआ था, उस पर भी जिस सहजता से उन्होंने मृत्यु का संवरण किया उसे देखकर

यदि आपको कोई नियम पसंद नहीं है, तो ऊंचे अधिकारी बनें और उस नियम को बदल दें। कम से कम ओर ऊँचा उठने का प्रयास तो करेंगे।

पण्डित गुरुदत्त जी दंग रह गये थे और उनका नास्तिकता मिश्रित संशयवाद तत्क्षण दूर हो गया था। इस घटना के बाद तो आपका जीवन पूरी तरह से ज्ञानार्जन, वेदों के प्रचार–प्रसार, ग्रन्थों के लेखन व सामाजिक हित के कार्यों में व्यतीत हुआ। इन कार्यों में जहां कुछ पत्र–पत्रिकाओं का सम्पादन व उच्चस्तरीय लेखों का प्रणयन शामिल था वहीं उन्होंने दयानन्द एंग्लो वैदिक स्कूल की स्थापना में सर्वाधिक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। डी.ए.वी. स्कूल के लिए धन संग्रह का जो कार्य किया गया उसमें सबसे प्रमुख व प्रभावशाली सफल भूमिका आपकी ही थी। आप जिस स्थान पर भी डीएवी स्कूल की स्थापना पर उपदेश करते थे तो लोग भावविभोर होकर अपना समस्त वा अधिकांश धन दान कर देते थे। वह डीएवी के आन्दोलन से पूरे उत्साह जुड़े थे और जब डीएवी में अंग्रेजी शिक्षा का प्रभाव अधिक हो गया और संस्कृत व हिन्दी भाषा को उसका उचित स्थान नहीं मिला, तो आप उससे पृथक भी हो गये थे। यदि आपने डीएवी के लिए देश भर में घूमकर धनसंग्रह करने में अपना योगदान न दिया होता तो हम कल्पना कर सकते हैं कि शायद डीएवी आन्दोलन सफल न हुआ होता। अतः डीएवी के विकास व उन्नति में आपका योगदान प्रमुख, सर्वोपरि एवं चिरस्मरणीय रहेगा।

महर्षि दयानन्द के बाद उनके साक्षात शिष्यों में आर्ष संस्कृत व्याकरण का कोई प्रमुख प्रथम विद्वान हुआ तो वह आप ही थे। आपने आर्य समाज, लाहौर की सदस्यता लेकर संस्कृत का अध्ययन आरम्भ कर दिया था। आप मेधावी तो थे ही, इसलिये संस्कृत का आपका अध्ययन शीघ्र ही पूरा हो गया था। न केवल आपने संस्कृत पढ़ी अपितु उस युग में आप संस्कृत के सबसे बड़े समर्थक व प्रचारक थे। यह बात तब थी जब कि आपका अंग्रेजी पर असाधारण अधिकार था। आज भी अंग्रेजी के विद्वानों को आपके ग्रन्थों को पढ़ने के लिए अंग्रेजी के शब्द कोषों का सहारा लेना पड़ता है। संस्कृत के प्रचार–प्रसार का कार्य महर्षि दयानन्द के बाद यदि प्रथम प्रभावशाली रूप से किसी ने किया तो वह पं. गुरुदत्त जी ने ही किया। आपने अपने घर पर ही संस्कृत श्रेणी व कक्षायें खोल रखी थी जिसमें सरकारी सेवा में कार्यरत बड़ी संख्या में लोग संस्कृत अध्ययन किया करते थे जिनमें कई उच्चाधिकारी भी थे। संस्कृत पर आपके असाधारण अधिकार का प्रमाण आपका ईश, माण्डूक्य व मण्डूक उपनिषदों का अंग्रेजी में किया गया प्रभावशाली व प्रशंसनीय भाष्य व अनुवाद है। यह कार्य उन दिनों सरल नहीं था और इस कोटि का भाष्य अंग्रेजी में किया जाना शायद् किसी के लिए भी सम्भव नहीं था।

विश्व व भारत में धर्म व संस्कृति का मूल आधार वेद और वैदिक साहित्य है। अंग्रेज भारत में आये तो उन्होंने यहां के धर्म व धर्म ग्रन्थों का अध्ययन भी किया व कराया जिससे यह निष्कर्ष निकला कि भारतीय धर्म व संस्कृति के ग्रन्थों का मिथ्यानुवाद व तिरस्कार किये बिना अंग्रेजों का राज्य स्थाई रूप नहीं ले सकेगा। अतः प्रो. मैक्समूलर आदि अनेक अंग्रेज विद्वानों ने संस्कृत का अध्ययन कर वेद और वैदिक साहित्य पर असत्य, भ्रामक, अविवेकपूर्ण व पक्षपातपूर्ण टिप्पणियां कीं। वह अपने उद्देश्य में अवश्य सफल होते यदि महर्षि दयानन्द का भारत में प्रादुर्भाव न हुआ होता। महर्षि दयानन्द ने भारत को स्थाई रूप

जब संशय हो, तो अगला कदम छोटा लें। अधिक अच्छा तो यह है, कि पहले संशय को दूर कर लें, फिर कदम बढ़ायें।

से गुलाम बनाने के मार्ग को वेदों के सत्यस्वरूप का प्रचार करके अवरुद्ध कर दिया और देश का धर्मान्तरण कर उसे स्थाई रूप से गुलाम बनाने का अंग्रेजी हकूमत का षडयन्त्र विफल कर दिया। उनके समय व बाद के समय में विदेशियों द्वारा भारतीय धर्म व संस्कृति मुख्यतः वेद और वैदिक साहित्य पर आक्षेप होते रहे जिसका प्रबल प्रतिवाद व सप्रमाण खण्डन पं. गुरुदत्त विद्यार्थी ने अपने अंग्रेजी लेखों व पुस्तकों के द्वारा किया। यहां हम उनके अंग्रेजी में लिखे गये लघु व अन्य ग्रन्थों का परिचय देना उचित समझते हैं। उनके ग्रन्थ हैं –

The Terminology of the Vedas, The Terminology of the Vedas and the European Scholars, Origin of Thought and Language, Vedic Texts Nos. 1-3 (Vayu Mandal, Water and Grihastha), Ishopanishat, Mandukyopanishat, Mundakopanishat, Evidences of Human Spirit, The Realities of Inner Life, Pecuniomania, Righteousness of Unrighteousness of Flesh Eating, Man's Progress Downwards, The Nature of Conscience, Conscience and the Vedas, Religious Sermons, A reply to Some Criticism of Swami's Veda Bhashya, Criticism on Monier Williams' Indian Wishdom etc. etc. अल्पायु में मृत्यु हो जाने के कारण बहुत से उनके ग्रन्थों को सुरक्षित नहीं रखा जा सका जो कि विद्वानों व अध्येताओं के लिए एक बहुत बड़ी हानि है। उनकी पुस्तक वैदिक संज्ञा विज्ञान अर्थात् Terminology of Vedas को आक्सफोर्ड में संस्कृत पाठ्यक्रम में निर्धारित किया गया था।

पण्डित जी का जीवन बहुआयामी जीवन था। उन पर बहुत कुछ लिखा जा सकता है। इस संक्षिप्त लेख में इतना कहना ही समीचीन है कि उन्होंने जीवन व प्राणों की चिन्ता किए बिना वेदों के प्रचार प्रसार का कार्य किया। वह लोकप्रिय वक्ता व उपदेशक थे। जनता उनके विचारों को ध्यान से सुनती थी और उनकी बातों का पालन करती थी। वह ऐसे वक्ता थे जिनकी कथनी व करनी एक थी। वह अपने जीवन का एक–एक क्षण वैदिक धर्म, संस्कृति के उत्थान व संवृद्धि के लिए व्यतीत करते थे। उनके कार्यों का उद्देश्य वैदिक धर्म का अभ्युदय, सामाजिक सुधार व देश सुधार, अविद्या का नाश व विद्या की वृद्धि, लोगों को ज्ञानी बनाकर देश व विश्व से सभी प्रकार के अज्ञान व अन्धविश्वासों को दूर करना आदि था। वह अपने समय के सबसे कम आयु के अजेय धार्मिक योद्धा थे। उनके कार्यों से वैदिक धर्म का संवर्धन हुआ जिसके लिए देश और समाज उनका ऋणी है। उनकी मृत्यु क्षय रोग से 19 मार्च, सन् 1890 को लाहौर में प्रातःकाल हुई थी। मृत्यु के समय उनकी आयु 26 वर्ष थी। परिवार में उनकी माता, पत्नी व दो छोटे पुत्र थे। सहस्रों लोग उनकी अन्त्येष्टि में सम्मिलित हुए थे। पण्डित जी की मृत्यु पर न केवल आर्य समाज के नेताओं ने अपितु अनेक मतों के विद्वानों ने भी उन्हें श्रद्धाजंलि देते हुए शोक प्रकट किया था। देश की आजादी के प्रसिद्ध नेता लाला लाजपत राय व जीवनदानी महात्मा हंसराज उनके सठपाठी थे तथा स्वामी श्रद्धानन्द उनके कार्यों में आत्मना सहयोगी थे। पण्डित जी ने इतिहास में वह कार्य किया जिसका देश व विश्व पर गहरा प्रभााव हुआ। अपने कार्यों से वह सदा–सदा के लिए अमर रहेंगे। उनका साहित्य, जीवन दर्शन व कार्य ही उनके स्मारक हैं। 151वीं जयन्ती पर उन्हें श्रद्धांजलि।

सौजन्य से-

कुकरेजा इंस्टीट्यूट ऑफ होटल मैनेजमेंट, देहरादून

आपके जीवन में आपने 'कितने वर्ष जिया', यह महत्वपूर्ण नहीं है।
महत्वपूर्ण तो यह है कि, ''आपके जिए वर्षों में जीवन कितना है।''

सत्संग का महत्व

–आचार्य भगवानदेव ''चैतन्य''

स्वर्ग और नरक कहीं स्थान विशेष में नहीं बल्कि यहीं पर हैं। वास्तव में व्यक्ति के सुख की स्थिति ही स्वर्ग है और दुःख की स्थिति नरक है। सुख–दुःख भी हमारे अपने ही कर्मों के आधार पर मिलता है। कर्मों का आधार हमारे अच्छे या बुरा बनना, सत्संग या कुसंग के आधार पर होता है। इसीलिए चाणक्य का कथन है – ''सत्संगः स्वर्गवासः अर्थात् सत्संग ही स्वर्ग का निवास है। इसलिए महामना शंकराचार्य जी सत्संग के महत्व के बारे में कहते हैं–

संगत्वे निःसंगत्वं निःसगत्वे निर्मोहत्वम्।
निर्मोहत्वे निश्चलत्वं निश्चलत्वे जीवन्मुक्तः।।

अर्थात् सत्संग से विवेक हो जाने पर व्यक्ति सांसारिक पदार्थों में न फंसकर निःसंग हो जाता है, संसार से निःसंग होने पर मोह दूर हो जाता है तथा मन की स्थिरता हो जाती है और जब मन परमात्मा की भक्ति में स्थिर हो जाता है तब व्यक्ति संसार सागर से तर जाता है। इसीलिए वे आगे आदेश देते हैं– 'संगःसत्सु विधीयताम्।' अर्थात् सदा सज्जनों का संग करो। समस्त ग्रन्थों में सत्संग का अत्यधिक महत्व बताया गया है। सत्संग द्वारा बड़े से बड़े पापी भी धर्मात्मा बनते हुए देखे गए हैं। कहते हैं कि एक बार आर्यसमाज के तर्क शिरोमणि तथा प्रसिद्ध शास्त्रार्थ महारथी स्वामी दर्शनानन्द जी का दिल्ली में एक सत्संग में प्रवचन हो रहा था। रोहतक से तीन चोर चोरी करने के लिए दिल्ली आए हुए थे मगर क्योंकि अभी गहरी रात में कुछ समय शेष था इसलिए वे भी केवल समय गुजारने के लिए स्वामी जी के सत्संग में एक ओर खड़े होकर उनका प्रवचन सुनने लगे। उस दिन स्वामी जी महाराज कर्मफल पर बोल रहे थे। अवश्यमेव भौक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम् अर्थात व्यक्ति को अपने अच्छे या बुरे कर्मों का निश्चित रूप से फल भोगना पड़ता है।

स्वामी जी महाराज ने उस दिन ऐसी सटीक और मार्मिक व्याख्या की कि उन चोरों का अन्तरमन भी हिल गया। वे अपने किए पर मन ही मन बहुत पछताने लगे और उन्हें अत्यधिक ग्लानि का अनुभव होने लगा। उन्होंने चोरी करने का विचार कुछ देर के लिए स्थगित कर दिया और स्वामी जी का प्रवचन समाप्त होने पर उनके पास जाकर कहा, 'स्वामी जी हम आपसे कुछ बात करना चाहते हैं।'' 'बोलिए' स्वामी जी ने सहजता से कहा 'यहां नहीं हम एकान्त में आपसे कुछ पूछना चाहते हैं।' चोरों ने कहा। 'चलिए' स्वामी जी ने एकदम खड़े होते हुए कहा। चोर उन्हें अपने साथ लेकर बहुत एकान्त स्थान में पहुंच गए तो स्वामी जी को कुछ शंका हुई कि कहीं ये लोग उन्हें किसी प्रकार की कोई हानि तो नहीं पहुंचाना चाहते हैं। फिर भी स्वामी जी आश्वस्त होकर उनके साथ लगातार चलते रहे और भी अधिक निर्जन स्थान पर ले जाकर उन्होंने स्वामीजी को एक ऊंचे स्थान पर बिठाया और स्वयं उनके चरणों के पास बैठकर उनसे पूछा, 'स्वामीजी क्या आप सच कह रहे थे कि किए हुए बुरे कर्मों का फल भोगना ही पड़ता है?' ''हां बिल्कुल! परमात्मा की न्याय व्यवस्था में व्यक्ति को बुरे कर्मों का कठोर से कठोरतम दण्ड भोगना पड़ता है। कोई भी कर्म बिना भोगे कभी समाप्त नहीं होता है और परमात्मा को किसी प्रकार का धोखा भी नहीं दिया जा सकता है'' स्वामी जी ने कहा।

किसी भी वस्तु का अधिक प्रयोग ही जहर है। चाहे भोजन, चाहे व्यायाम, चाहे पढ़ाई चाहे खेल–कूद, कुछ भी हो अधिक न करें।

''स्वामी जी हम रोहतक के निवासी है तथा चोरी करने के लिए दिल्ली आए थे मगर आपके सत्संग में आपका प्रवचन सुनकर हमारा मन अब चोरी करने को नहीं कर रहा है – 'बहुत अच्छी बात है जो पाप आप लोगों ने अब तक किए वह तो भोगने ही पड़ेंगे मगर अब प्रायश्चित करके आगे पुण्य कर्मों के करने में अपना जीवन लगा दो। आप चोर से महात्मा बन जाएंगे। स्वामी जी ने कहा। उन्होंने स्वामी जी को दूध पिलाकर सुरक्षित उनके स्थान पर पहुंचाया। स्वामी जी के सत्संग से इनके जीवन में आमूल–चूल परिवर्तन हो गया तथा बाद में अपने जीवन में इन तीनों ही लोगों ने बहुत उत्तम कार्य किए। इन महानुभावों का नाम था– 'चौधरी पीरूसिंह, लाला इच्छाराम और चौधरी जुगललाल जी। हृदय परिवर्तन के बाद चौधरी पीरूसिंह जी ने अपनी तीस बीघा जमीन दान में देकर मटिण्डू नामक स्थान में स्वामी श्रद्धानन्द जी द्वारा एक गुरूकुल की स्थापना कराई और उस गुरूकुल को गुरूकुल कांगड़ी की शाखा बनाया। दूसरे लाला इच्छाराम जी ने अपने दोनों बच्चों को गुरूकुल कांगड़ी में पढ़ाया और इनके दोनों बेटों ने समाज सेवा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

उनके दूसरे बेटे का नाम पं. हरिश्चन्द्र विद्यालंकार था जो वेदों के प्रकाण्ड विद्वान बने तथा उनका वेदभाष्य अत्यधिक महत्वपूर्ण हैं। उनके दूसरे बेटे थे सुप्रसिद्ध समाज सेवक और हिन्दू नेता प्रो. रामसिंह जी, जो आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के वर्षों प्रधान भी रहे तथा गुरूकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के कुलपति भी रहे। तीसरे व्यक्ति श्री चौधरी जुगललाल जेलदार जी ने एक अंग्रेज भक्त जिलाधीश को उनके मुंह पर ही फटकारा था कि आपके न्यायालयों में न्याय नहीं होता है....।

सत्संग से अज्ञानता दूर होकर व्यक्ति के भीतर ज्ञान का प्रकाश होता है। सत्संग ही व्यक्ति के सब प्रकार के मानसिक रोगों की औषधि है। यह सत्संग ही सच्चा तीर्थ है क्योंकि यह व्यक्ति को पतनावस्था से मुक्त करने वाला है। सत्संग से ही व्यक्ति को आत्मिक शान्ति प्राप्त होती है। इसलिए जब कभी व्यक्ति को किसी भी प्रकार का दुःख हो तो सत्संग ही उसका एकमात्र उपचार है। कैसे व्यक्ति का संग करना चाहिए। इस सम्बन्ध में महाभारत में एकस्थान पर भीष्म पितामह युधिष्ठिर से बहुत ही सुन्दर बात कहते हैं –

अतृप्यन्तस्तु साधनां य एवागमबुद्धयः।
रमित्येव सन्तुष्टारतानुपरास्रव च पृच्छ च।।
कामार्थौ पृष्ठतः कृत्वा लोभमोहानुसारिणौ।
धर्मःइत्येव सम्बुद्धास्तानुपास्रव च पृच्छ च।।

जो साधु संग के लिए नित्य उत्कण्ठित रहते हों, सत्संग से कभी तृप्त न होते हो, जिनकी बुद्धि आगम–प्रमाण को ही श्रेष्ठ मानती हों, जो सदा सन्तुष्ट रहते हो तथा लोभ–मोह की ओर खींचने वाले अर्थ और काम की उपेक्षा करके धर्म को ही उत्तम समझते हों, ऐसे महापुरूष का संग करो और उनसे अपना सन्देह पूछो। पितामह भीष्म का यह उपदेश बहुत ही सार्थक एवं व्यावहारिक सत्संग संजीवनी बूटी है मगर कोई विरला ही व्यक्ति इसका पान कर पाता है। ऐसे व्यक्तियों की संगति से व्यक्ति का यह लोक और परलोक निश्चित रूप से संवर जाता है इसलिए सत्संग के लिए व्यक्ति को सदा–सर्वदा लालायित रहना चाहिए क्योंकि यही व्यक्ति के सुख–दुःख अर्थात् स्वर्ग या नरक का आधार है। कबीर जी की उक्ति द्रष्टव्य है –

कबीरा संग साधु की, ज्यों गंधी की बास।
जो कुछ गंधी दे नहीं, तो भी बास सुबास।।

सावधान! केवल वे ही लोग आपका परीक्षण नहीं करते, जिनके साथ आप रहते हैं।
बल्कि वे लोग भी आपका परीक्षण करते हैं, जो आपसे दूर रहते हैं।

सदैव आनन्द से रहो

स्व० धर्ममुनि परिव्राजक

रणे रणे अनुमदन्ति विप्राः। अथर्व 5–2–4।

ज्ञानी प्रत्येक संघर्ष में आनन्द से रहते हैं। किसी महात्मा के पास एक मनुष्य आकर कहने लगा, ''महाराज! मुझे अपने पास रख लीजिए और ऐसी कृपा कीजिए कि मैं सदा आनन्द से रहूं।'' विवाह नहीं करवाया था, घर का कोई बन्धन नहीं था, सरल व्यक्ति था सो महात्मा ने कहा – 'भैया रहो हमारे पास, हमें कोई आपत्ति नहीं है और आनन्द तो तेरे अन्दर ही है।'' वह मनुष्य शिष्य भाव से साधु के पास रहने लगा। साधु ने उसकी योग्यता के अनुसार उसे एक गाय दे दी और कहा इसे चरा लिया करो और इसका दूध पी लिया करो। गौ की सेवा भी हो जावेगी और तुम्हारा पोषण भी होता रहेगा। महात्मा की आज्ञानुसार वह गाय को चराता, दूध पीता और मौज करता। प्रातः सायं काल महात्मा जी के आदेशानुसार सन्ध्या उपासना भी करता।

उसने एक दिन महात्मा से कहा– महाराज! बड़ा आनन्द है, खूब मस्ती है। आपने बहुत बढ़िया बात बताई।' महात्मा जी मुस्करा दिये और बोले–'ठीक है, ऐसे ही आनन्द में रहना, गड़बड़ाना नहीं।'

कुछ दिनों के बाद एक दिन गाय कहीं चली गई। रात तक भी नहीं मिली। शिष्य दुःखी होता हुआ महात्मा के पास पहुंचा सिसक– सिसक कर रोने लगा और बोला–'महाराज! गाय खो गई, अब कैसे होगा? हाय–हाय सब आनन्द जाता रहा।'' महात्मा हंसकर बोले –'वाह भाई! तुम दुःखी हो रहे हो अभी तो अधिक आनन्द आयेगा। गाय गई सब झंझट समाप्त हुआ। बस अब मौज उड़ाओ।' शिष्य उत्सुकतापूर्वक बोला– ' वह कैसे?आनन्द कैसे बढ़ गया।' महात्मा बोले – 'देखो भाई! गाय के पीछे–पीछे दिन भर फिरते थे, कष्ट होता था, चारे–घास के चक्कर में रहते थे, अब सब चिंता मिट गई। गांव से आटा मांग लाओ, रोटी बनाओ और खाओ। दो घंटे काम, दिन भर आराम।' शिष्य प्रसन्न होकर बोला –'वाह महाराज! यह तो बड़ी सुन्दर युक्ति बताई, दिन भर गाय के पीछे घूमते–घूमते थक भी जाता था, किसी दिन दूध भी नहीं दूहने देती थी, भूखा ही रहना पड़ता था, अब ठीक रहेगा।'' अब गुरू की आज्ञानुसार वह आटा मांग लाता और रोटी बनाकर खाता और मस्त रहता। एक दिन महात्मा से बोला–''खूब मौज–मेला है महाराज! अब तो पहले से भी अधिक मस्ती है। सन्त बाले –''ठीक है ऐसे ही मस्त रहो'

एक दिन वह गाय लौट आई, उसे देखकर वह बहुत दुःखी हुआ और साधु के पास जाकर रोने लगा, और रोते हुए कहा– 'महाराज! वह झगड़े की वस्तु फिर आ गई।'' साधु ने प्रसन्नता की मुद्रा में कहा– 'वाह अब तो विशेष आनन्द की बात हुई। चूल्हा फूंकना समाप्त हुआ, मांगने का झंझट मिटा, मांगना मरन समान है–

मांगन मरन समान है मत मांगो भीख।
मांगन से मरना भला यह सत्गुरु की सीख ।।
आव गई आदर गया नैनन गया स्नेह।
यह तीनों तबही गये जबहि कहा कुछ देय।।

जंगल में गाय को चराने से पुण्य भी होगा, समय का सदुपयोग होगा, दूध पी कर स्वास्थ्य भी अच्छा रहेगा। गौ आ गई तुम्हारे सब पाप कट गये, अब आनन्द ही आनन्द होंगे। शिष्य सरल हृदय तो था ही, बोला, बात तो आपने बढ़िया बताई, परन्तु जब गाय खो गई थी तब भी आपने कहा अच्छा हुआ, और आ गई तब भी कहा अच्छा हुआ, यह क्या बात है? महात्मा जी बोले–''यही तो दुःख निवृत्ति और आनन्द प्राप्ति का सरल उपाय है। प्रत्येक अवस्था में विचारों द्वारा प्रसन्न रहना ही आनन्द का साधन है –

राजी हैं हम उसी में जिसमें तेरी रजा है।

गुरु का प्रसाद

डॉ० सुधीर कुमार आर्य

विद्या ददाति विनयं विनयाद्याति पात्रताम्।
पात्रत्वाद् धनमाप्नोति धनात् धर्मः तत् सुखम्।।

व्यक्ति में विद्या से नम्रता आती है, नम्रता से मनुष्य योग्यता प्राप्त करता है। योग्यता से धन की प्राप्ति होती है। व्यक्ति धन से धर्म के कार्य करता है, जिससे सुख मिलता है। एक बार सद्गुरू की प्राप्ति के लिए दर–दर भटकते हुए स्वामी दयानन्द को स्वामी पूर्णानन्द के निर्देश से मथुरा में प्रज्ञाचक्षु दण्डी विरजानन्द गुरू मिले। प्रकाण्ड पण्डित गुरू तथा अनोखे शिष्य का यह मिलन इतिहास का स्वर्णमय काल था। गुरू के प्रति असीम श्रद्धा तथा नम्रता से दयानन्द ने गुरू जी की सेवा में लगे हुए बहुत से सेवकों को सेवामुक्त कर दिया तथा बड़ी नम्रता और श्रद्धा से गुरू कुटिया की सफाई तथा स्नानादि के लिए जलाहरणादि क्रिया करने लगे। परन्तु एक दिन की बात है कि गुरू विरजानन्द जी ने दयानन्द की किसी भूल पर आवेश में आकर दयानन्द के ऊपर यष्टि (लाठी) से प्रहार किया, (डण्डे से पिटाई की)। इस प्रहार के कारण दयानन्द की भुजा पर गहरा जख्म हो गया। परन्तु नम्र दयानन्द अपनी पीड़ा को भुलाकर गुरू जी से प्रार्थना की भगवन्! ब्रह्मचर्यपालन से मेरा शरीर वज्र के समान कठोर है, परन्तु आपका शरीर और भुजाएं सुकोमल हैं मुझे पीटने पर आपके शरीर को क्लेश पहुंचा होगा, अतः आप मुझ पर स्वयं प्रहार न करे– ऐसा कहते हुए गुरूदेव के कोमल हाथों को अपने हाथों से दबाने लगे। गुरू द्वारा किये हुए प्रहार की निशानी उनके हाथ पर जीवन भर बनी रही। यह निशान को देखकर स्वामी जी बड़े गर्व तथा स्वाभिमान के साथ गुरूदेव के उपकार को स्मरण किया करते थे।

शिक्षा–ताडने वहवो गुणाः।।

1. विद्याध्ययन काल में गुरू द्वारा की गयी प्रताड़ना विद्यार्थी के दोषों को दूर करके उसे श्रेष्ठ बनाती है।
2. धन्य हैं वे लोग जिन्हें गुरू की ताड़ना प्रसाद रूप में मिलती है।

सूचना

पवमान पत्रिका के सुविज्ञ पाठको को सूचित किया जाता है कि सितम्बर 2014 से पत्रिका का वार्षिक मूल्य 150 रुपये हो गया है। जिन ग्राहकों ने पत्रिका शुल्क जमा नहीं किया है वह पिछले वर्षो सहित इस वर्ष का शुल्क शीघ्र जमा कर दें। अगले माह की पवमान पत्रिका केवल उन्हीं ग्राहकों को भेजी जाएगी जिनके द्वारा पत्रिका का शुल्क जमा कर दिया गया हो। आप कैनरा बैंक, क्लाक टावर, देहरादून (IFSC code : CNFB0002162) खाता 'पवमान' खाता सं. 2162101021169 में शुल्क जमा करा सकते हैं। आश्रम के दूरभाष नं. 0135–2787001 पर सूचना प्राप्त होने पर आपके द्वारा जमा शुल्क की रसीद आपके पते पर भेज दी जायेगी। पत्रिका प्राप्त न होने पर इसकी सूचना आश्रम के ईमेल : vaidicsadanashram88@gmail.com अथवा मोबाईल नं. 9412051586 पर एसएमएस भेजने पर पत्रिका आपको पुनः भेज दी जाएगी।

ईश्वर, आत्मा और प्रकृति का यथार्थ स्वरूप जानने, निष्काम कर्म करने और सर्वव्यापक, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान आदि लक्षण वाले ईश्वर की सच्ची उपासना करने से मोक्ष होता है।

सच्चा मानव धर्म

–श्रीमती पुष्पलता सक्सेना

पर्वतों की उपत्यकाओं में अक्षर ऋषि का आश्रम था। वे दूर–दूर से आये विद्यार्थियों को विद्या दान देते थे। ज्ञान का निरन्तर दान करने से विद्यार्थियों द्वारा अन्न जुटा पाना सरल हो जाता था। खाने भर के लिये अन्न उपार्जित होना कोई बड़ा कार्य नहीं था। आश्रम सरोवर के किनारे होने के कारण नाना प्रकार के पक्षी अपने मधुर कलरव से एक अनुपम मनोहारी दृश्य उत्पन्न कर देते थे। सायं अक्षर ऋषि उद्यान में भ्रमण को निकलते, तो अपने छात्रों की कार्य कुशलता, कृषि की उत्पादकता, भोजन की व्यवस्था देखकर चकित हो जाते। वे सभी को पुत्रवत् स्नेह देते, और उनकी कुशलक्षेम पूछते जाते।

एक दिन ऋषि के आश्रम में एक संत आये। संत ने प्रार्थना की कि मुझे कुछ अन्नदान दें, ताकि मैं भूखे, निर्धन, अपाहिज मनुष्यों के लिये सदावर्त खोल सकूं। संत की बात को सुनकर अक्षर ऋषि थोड़ा असमंजस में पड़ गये, क्योंकि वह जानते थे उनके पास ज्ञान का तो अथाह भंडार है, पर भोज्य पदार्थ तो सीमित ही मात्रा में उपलब्ध हो सकता है। इतना अन्न तो जुटा पाना बड़ा ही कठिन कार्य है, जिससे सदावर्त खोला जा सके। पर ऋषि संत को इन्कार भी कैसे कर सके थे। थोड़ा संकुचित होकर संत से बोले – हे ज्ञान विज्ञान प्रवर! मैं आपको मात्र एक दिन के सदावर्त का अन्न तो दे सकता हूं, पर नित्य प्रति अन्न निकलना असंभव है, क्योंकि मेरा सारा समय तो ज्ञान देने में ही व्यतीत हो जाता है। थोड़ा बहुत सायं को शिष्य कृषि की ओर ध्यान देते हैं। उससे उन्हीं की जीविका ही कठिनता से चल पाती है। आचार्य प्रवर! जो मैं दे सकता हूं आप उसे ही ग्रहण कीजिये।

संत ने कहा ''ऋषिवर! आप ज्ञान का दान देकर श्रेष्ठ कर्म तो कर ही रहे हैं, पर भूखे, क्षुधित मनुष्यों को अन्न देना भी तो श्रेष्ठ कर्म है। केवल अपने शिष्यों और अपने लिये ही भोजन व्यवस्था का प्रबन्ध करना स्वार्थ की श्रेणी में आता है। आपको लोकमंगल के लिये भी समर्पित होना चाहिये। यही मानव धर्म है।

विद्वान ऋषि को संत का यह कथन उचित लगा और उन्होंने संत को एक दिन का भूखे, निरीह, अपाहिजों के लिये सदावर्त का अन्न देकर क्षमा मांगी और कहा – 'हे महर्षि संत प्रवर! आज से मै आपके उपदेश का अवश्य ही पालन करूंगा।'

अगले दिन ऋषि ने अपनी जीवन सहचरी से मंत्रणा की और स्वयं भी परिश्रम द्वारा शिष्यों के संग कृषि के उत्पादन में सहयोग देना प्रारम्भ कर दिया। साथ ही निश्चय किया कि प्रतिदिन किसी निर्धन क्षुधा पीड़ित को भोजन करा कर ही अन्न–जल ग्रहण करेंगे। इस प्रकार अपने नियम का पालन करते हुए ऋषि दम्पति को असीम आनन्द का अनुभव होने लगा। वह अपनी आत्मा में आत्मसन्तोष अनुभव करने लगे। इस प्रकार एक लम्बा अन्तराल व्यतीत हो गया। निबद्ध पति–पत्नी अपनी नियमित गतिविधि में किंचित् उल्लंघन नहीं करते थे।

वर्षा के दिन आ गये। अंशुमालि ने आंख मिचौनी खेलना प्रारम्भ कर दिया। एक दिन घनघोर मेघाच्छन्न आकाश में वर्षा अपना तांडव करने लगी। ऋषि दम्पति सारा दिन

हर दिन 'नया जन्म' समझें। सुबह उठने पर ऐसा लगना चाहिए, कि भगवान ने सुख प्राप्ति के लिए आज कितना अच्छा अवसर दिया है।

प्रतीक्षा करते रहे कि कोई उनके द्वार पर आये और वह उसे भोजन करा कर स्वयं भोजन करें। पर मरीचिमाली को न निकलना था, न निकले, वर्षा में कोई भी राही उधर नहीं आया। कई दिन तक निरन्तर वर्षा के कारण उनका व्रतखंडित होने की आशंका होने लगी। आखिरकार ऋषि दम्पति किसी सत्पात्र की खोज में घर से निकल पड़े। वर्षा अपने पूरे जोश में थी, पर उन्हें कुछ भी परवाह नहीं थी। तभी उन्हें एक पेड़ के नीचे एक कुष्ठ रोगी पीड़ा से कराहता हुआ दिखाई दिया। घावों से रक्त बह रहा था, सिकुड़ा हुआ वह वृद्ध गुमसुम पीड़ा को सह रहा था। ऋषि दम्पति उसके पास पहुंचे और उसको सहारा देकर घर तक लाये। गर्म पानी कर उसके घावों को धोया, पट्टी बांधी और भोजन की व्यवस्था करने लगे। तभी वह वृद्ध उनकी सेवा से थोड़ा सन्तुष्ट हो गया और उसकी पीड़ा भी कुछ कम हो गई। वह कहने लगा ''आर्य! मैं चांडाल हूं। आप करूणा मूर्ति हैं। ईश्वर आपका मंगल करे। आप मुझे रूखा–सूखा, बासी भोजन दे दें और उसी पेड़ के नीचे छोड़ आयें। मैं आपका कृतज्ञ रहूंगा।''

ऋषि दयाद्र हो उठे। उनके नेत्रों से जलधारा फूट पड़ी। उन्होंने विनम्र शब्दों में उससे कहा– ''हे अतिथि! हम ऐसी मिथ्या मर्यादायें नहीं मानते, जो मानवीय सौजन्य में बाधा पहुंचाये। हम सभी एक ही ईश्वर की संतान हैं। हममे और तुममे कोई भेद नहीं। आप हमें सेवा का अवसर प्रदान करें और भोजन करके हमें कृतार्थ करें।

वृद्ध उनका आतिथ्य और सेवा देखकर कुछ न बोल सके। तृप्ति से भोजन करके आराम से निद्रा देवी की शरण ली। इस प्रकार उन ऋषि दम्पति ने अपना व्रत पूर्ण किया। रात्रि को जब ऋषि अक्षर सो गये तो उन्हें लगा कि प्रभु उन पर स्नेह दृष्टि से देख रहे हैं मानों कह रहे हो कि यही सच्चा मानव धर्म है।

वैदिक साधन आश्रम तपोवन नालापानी देहरादून द्वारा आगामी महीनों में आयोजित कार्यक्रम

1. योगाचार्य डॉ० विनोद कुमार शर्मा द्वारा तपोवन आश्रम देहरादून में प्राकृतिक चिकित्सा शिविर लगाया जा रहा है। चिकित्सा शुल्क आवासीय व्यक्तियों के लिए चार हजार रुपये है तथा अनावासीय के लिए दो हजार रुपये है	**12 मई से 18 मई 2015 तक**
2. आचार्य सत्यजीत जी (रोजड़) धौलास आश्रम देहरादून मेंसांख्यदर्शन पढ़ायेंगे। बौद्धिक/शारीरिक रूप से समर्थ तथा सांख्यदर्शन समझने की योग्यता रखने वाले व्यक्ति ही शिविर में पधारने का कष्ट करें।	**15 मई से 20 जून 2015 तक**
3. आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य के मार्गदर्शन में आयोजित ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका उपासना विषय (संस्कृत भाग सहित) एवं आर्योद्देश्य रत्नमाला प्रशिक्षण शिविर	**4 जुलाई से 12 जुलाई 2015**

सभी आर्य भाई–बहनों से विनम्र निवेदन है कि उपरोक्त कार्यक्रमों में उत्साहपूर्वक भाग लें। विस्तृत जानकारी के लिए वैदिक साधन आश्रम तपोवन नालापानी, देहरादून से सम्पर्क करें।

With best wishes
from:

APEX

APEX ENGINEERS

Manufacturer of All type
of

JIGS, FIXTURE, TOOLS
and
GAUGES

❖❖❖

Please contact
Ramesh Narang
64/1 Basai Enclave
Part-1, Gurgaon (Haryana)
Mob. : 09810481720

आधुनिक संदर्भ में विद्या की महत्ता एवं व्यवहारिक उपादेयता

—कुँवर भुवनेन्द्र सिंह

विद्या शब्द की उत्पत्ति 'विद्' धातु एवं क्यप् तथा टापू प्रत्यय के योग से हुई है। वामन शिवराम आप्टे ने हिन्दी—संस्कृत कोष में ज्ञान, शिक्षा एवं विज्ञान को ही विद्या कहा है। ईशावास्योपनिषद् के मंत्र संख्या ग्यारह के अनुसार विद्या को निम्नवत् परिभाषित किया गया है— 'सा विद्या या विमुक्तये।' अर्थात् विद्या वह है जो हमें मुक्ति (मोक्ष) प्रदान करे। अन्य शब्दों में जिसके द्वारा हम रोग, शोक, पाप, गरीबी, बेकारी, अज्ञानता तथा कुसंस्कारादि से मुक्ति प्राप्त कर सकें, वही विद्या है। ऐसी ही विद्या को प्राप्त करने वाले व्यक्ति विद्वान कहे जाते हैं। श्रुति के मतानुसार 'विद्ययामृतमश्नुते' अर्थात् जो मनुष्य विद्या (ज्ञान) को जान लेता है, वह अमृत को भोगता है। तात्पर्य यह है कि विद्या मनुष्य को अमरत्व प्रदान करती है।

सुभाषित रत्नभाण्डारागार (2/16) में विद्या की प्रशंसा करते हुए कहा गया है—

विद्या नाम नरस्य कीर्तिरतुला भाग्यक्षये चाश्रयः।
धेनुः कामदुधा रतिश्च विरहे नेत्रं तृतीयं च सा।।

अर्थात् विद्या मनुष्य की अनुपम कीर्ति है, दुर्भाग्य के समय की शरणस्थली है, सभी कामनाओं को देने वाली (कामधेनु) है, वियोग काल (तन्हाई) में रति (प्रिय मिलन का सुख) है और तीसरा नेत्र (ज्ञान नेत्र) है।

मानव जीवन में विद्या की व्यावहारिक उपयोगिता का निरूपण करते हुए हमारे नीतिग्रन्थों ने विद्या के प्रतिफल एवं स्वरूप के सम्बन्ध में एक महत्वपूर्ण सूत्र बताया है—

विद्या ददाति विनयं, विनयं ददाति पात्रतां।
पात्रत्वात् धनमाप्नोति, धनात धर्मततोसुखम।।

अर्थात् विद्या हमें विनयशीलता प्रदान करती है। विनयशीलता से पात्रता निखरती है। पात्रता से धन की प्राप्ति होती है। धन से धर्म विकसित होता है और फिर धर्म से सभी प्रकार के सुखों की प्राप्ति संभव है।

विद्या जीवन जीने की एक कला है। उदारता, सौम्यता, त्याग, सेवा, नमनीयता, परोपकार और सम्वेदनशीलता विद्या के ही रूपान्तरण हैं। आत्मवत् सर्वभूतेषु तथा वसुधैव कुटुम्बकम् के भाव विद्या से ही उत्पन्न होते हैं। विद्या के जागरण से मनुष्यता की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति हो जाती है और मनुष्य पशुता से उबर कर देवत्व की ओर बढ़ने लगता है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि विद्या जहां मनुष्य को मनुष्यत्व का पाठ पढ़ाती है, वहीं वह उसे जीवन जीने का सलीका भी बताती है। विद्या का अर्थ है, दृष्टिकोण का परिष्कार तथा चिन्तन और भावोल्लास में उत्कृष्टता का निखार। विद्या के बिना मनुष्य के अन्तस्तल में छिपी हुई रहस्यमयी दिव्यता का विकास हो ही नहीं सकता।

मनुस्मृति में विद्या के चौदह भेदों का उल्लेख किया गया है जो निम्नलिखित है—

अङ्गानि वेदाश्चत्वारो मीमांसा न्याय विस्तरः।
पुराणं धर्मशास्त्रं च विद्या ह्योताश्चतुर्दश

अर्थात् चार वेद, छः वेदांग (शिक्षा, कल्प, ज्योतिष, निरुक्त, छन्द और व्याकरण)

यदि आप अपने कार्य में आनंद लेते हैं, तो कार्य में सफलता निश्चित है।
यदि अपने कार्य को मुसीबत समझते हैं, तो सफलता में संशय है।

धर्मशास्त्र, मीमांसाशास्त्र, न्यायदर्शन और पुराण। विद्या के ये चौदह भेद हैं।

यह सर्वविदित है कि ज्ञान मानव जीवन के चरम लक्ष्य (भगवत्प्राप्ति) का एक प्रमुख साधन है। तभी तो भगवान श्रीकृष्ण ने गीता (4/38) में ज्ञान की महत्ता का प्रतिपादन करते हुए कहा है– न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते।' अथार्त् इस लोक में ज्ञान के समान पवित्र करने वाला कोई अन्य साधन नहीं है।

ज्ञान के दो अंग हैं। एक शिक्षा और दूसरा विद्या। प्राणी जिस साधन से ज्ञान उपार्जित करता है, उसी ज्ञान का नाम शिक्षा है –शिक्ष्यते विद्योपादीयतेऽनयेति शिक्षा। शिक्षा तो शिक्षालयों में पढ़ाई जाती है जिसे पढ़ कर लोग ग्रेजुएट, डाक्टर, वकील, इंजीनियर और प्रोफेसर आदि बनते हैं तथा जीविकोपार्जन करते हैं।

लेकिन जिस ज्ञान को प्राप्त कर मनुष्य अपनी मान्यताओं, आकांक्षाओं एवं आदर्शों का निर्माण करता है, वही ज्ञान विद्या है। विद्या का आविर्भाव स्कूल–कालेज से नहीं होता, अपितु इसका आविर्भाव स्वाध्याय, सत्संग, चिन्तन, मनन एवं सत्साहित्य पढ़ने से होता है। प्रकारान्तर से हम कह सकते हैं कि ज्ञान का महत्तर स्वरूप ही विद्या है तथा शिक्षा और विद्या का सम्मिलित स्वरूप ज्ञान है। इस प्रकार दोनों महत्वपूर्ण और दोनों आवश्यक हैं। शिक्षा से जहां हमें सांसारिक सफलताएं मिलती हैं, वहीं विद्या से हमारे आन्तरिक गुणों (जैसे प्रेम, दया और करूणा आदि) का विकास होता है। इस प्रकार दोनों (शिक्षा और विद्या) का समावेश हमें स्वर्गिक आनन्द की प्राप्ति कराता है। तभी तो शिक्षाभ्यास के साथ ही साथ विद्याभ्यास की आवश्यकता पर भी विशेष बल दिया गया है।

प्राचीन काल में विद्या के महत्व को समझा जाता था तथा उसे शिक्षा का एक अभिन्न अंग बनाकर रखा जाता था। गुरुकुलों में शिक्षा सम्बन्धी विषय गौण माने जाते थे, जबकि विद्या सम्बन्धी विषय अनिवार्य थे। गुरुकुलों की प्रशिक्षण पद्धति में जहां भाषा, गणित, इतिहास, भूगोल तथा शिल्पादि विषयों का समावेश रहता था, वहीं ऐसे वातावरण का भी सृजन होता था जिसमें शिक्षार्थी को अपनी आत्मचेतना के स्तर को आदर्शवादी दृष्टिकोण के अनुरूप ढालने का अवसर मिल सके। वास्तव में उन दिनों ऐसी पढ़ाई पर विशेष बल दिया जाता था जो व्यक्ति के आत्मीय गुणों का विकास करती थी।

किन्तु आज शिक्षा का विकास तो हो रहा है लेकिन विद्या की अनवरत उपेक्षा हो रही है। आज के समाज–निर्माता भौतिक जानकारियों वाली अर्थकरी (अर्थप्रधान) शिक्षा को प्रधानता देते हैं। इससे शिक्षार्थी को क्षेत्र विशेष में क्रियाकुशल बनने का लाभ तो मिलता है, लेकिन उसे वहां ऐसा कुछ नहीं मिलता जिससे उसकी अन्तः चेतना का परिष्कार हो सके। यही मुख्य कारण है कि संसार में आज दुःख, शोक और सन्ताप में निरन्तर वृद्धि हो रही है।

यह सत्य है कि विज्ञान, शिल्प, कला तथा अर्थोपार्जन का अपना कार्यक्षेत्र है अैर अपना महत्व है। किन्तु यह भी नहीं भूलना चाहिए कि व्यक्तित्व का परिष्कार एवं परिमार्जन भी अपने आप में अत्यन्त महत्वपूर्ण है। जीवन जीना एक कला है। लेकिन जिसे सलीके का जीवन जीना नहीं आया, उसका सारा शिक्षा–लाभ व्यर्थ है। यह भी सत्य है कि धनवान, गुणवान एवं शक्तिवान का अपने क्षेत्र में विशेष महत्व है। लेकिन सबसे बड़ा महत्व तो

उस परिष्कृत व्यक्तित्व का है जिसे विद्या के माध्यम से ही प्राप्त किया जा सकता है।

यद्यपि प्राचीन काल में आज के जितने स्कूल और कालेज नहीं थे। लेकिन तब भी लोग विद्वान होते थे। उस समय उपयोगी शिक्षा एवं विद्या का इतना अधिक प्रचलन था कि हर ग्राम एवं नगर स्वतः कालेज हुआ करते थे। वहां के निवासी अपने कुटुम्बियों एवं नगरवासियों से ही बहुमूल्य ज्ञान प्राप्त कर लेते थे। मेघनाद, कुंभकर्ण, अंगद, हनुमान, अर्जुन तथा भीम जैसे महारथी हाईस्कूल पास थे अथवा बी.ए.?इसका कहीं कुछ पता नहीं चलता। इसी प्रकार कबीर, रैदास अथवा दादू आदि सन्त न तो साहित्य के विद्वान थे और न व्याकरण के पण्डित। फिर भी उन सब की विद्या आज के अध्यापकों की अपेक्षा कहीं अधिक व्यवहारिक, यथार्थपरक और जीवनोपयोगी थी।

अतः प्रश्न उठता है कि फिर हम आज क्या पढ़ें तथा अपने बच्चों को क्या पढ़ावें? इस प्रश्न का बड़ा सीधा सा उत्तर है कि हम आज उसी विद्या का अध्ययन और अध्यापन करें जो विद्या हमें शील, संयम, सद्बुद्धि, विवेक, उत्साह, सेवा सहयोग तथा सुसंस्कारादि का पाठ पढ़ाती हो। उच्च शिक्षा के नाम से प्रचलित आज की अनुपयोगी शिक्षा से हमारा कुछ भी भला होने वाला नहीं है। हमें तो आज एक ऐसी जीवनोपयोगी एवं व्यवहारिक शिक्षा की आवश्यकता है जो नई पीढ़ी को शूरवीर, शिल्पी, वैज्ञानिक और चरित्रवान बनाने के साथ ही साथ उनमें प्रेम, करूणा एवं सहिष्णुता के भाव भी भर सके। वास्तव में आज ऐसी ही समन्वित और समग्र शिक्षा प्रणाली के निर्माण की आवश्यकता है जिससे आज की पीढ़ी की भौतिक समृद्धि तो हो ही, उसकी आत्मोन्नति का मार्ग भी प्रशस्त होता रहे।

वैयक्तिक चरित्र निष्ठा, चिन्तन की उत्कृष्टता और क्रियाकलाप में आदर्शवादिता का जो समावेश कर सके, ऐसी ही विद्या का बीजारोपण एवं अभिवर्द्धन आज के युग की सबसे बड़ी आवश्यकता है। सर्वनाश की ओर भागती हुई मानव जाति को आज सामूहिक आत्महत्या से रोकना मात्र ऐसी ही विद्या से संभव है।

ज्ञातव्य है कि किसी देश की गरिमा उसकी भौतिक उपलब्धियों से नहीं अपितु वहां के चरित्रवान और आदर्शवादी नागरिकों से आंकी जाती है। वास्तव में किसी देश के नागरिक ही उस देश के गौरव होते हैं। उदाहरणस्वरूप विगत वर्षों में जर्मनी, जापान तथा इजराइल जैसे छोटे–देशों ने जिस वीरता, दृढ़ता एवं अदम्य साहस का परिचय दिया तथा पूरे संसार को चमत्कृत किया, वह सब वहां के नागरिकों के मनोबल का ही परिणाम था।

आज की स्थिति कुछ भी क्यों न हो, हमें प्रत्येक दशा में यह स्वीकार करना होगा कि मानवीय प्रगति तथा सुख–शांति की आधार–शिला विद्या ही है जिसके महत्व को हम कभी नकार नहीं सकते। इसके अतिरिक्त हमें इस तथ्य को भी हृदयंगम करना होगा कि बिना विद्या के व्यक्ति को कभी भी सुख–शांति नहीं मिल सकती और न विद्या के बिना समाज की प्रगति ही संभव है।

अतः सामाजिक परिवर्तन तथा प्रत्यावर्तन के इस युग में हमें आज इस विद्या को खोजना होगा जो मनुष्य को मनुष्यत्व दे सके, उसे जीवन जीने का सलीका सिखा सके और मानव जीवन के उद्देश्यों एवं चरम लक्ष्यों से भी उसे परिचित करा सके।

आप अपने साथ हुए छोटे–मोटे अन्याय को
ईश्वर के न्याय पर छोड़ दें और कहें–'कोई बात नहीं।'

–वैदिक साधन आश्रम, तपोवन–देहरादून में गायत्री यज्ञ सम्पन्न–

'जो यज्ञ नहीं करता वह पाप करता है–स्वामी चित्तेश्वरानन्द'

–मनमोहन कुमार आर्य

आज 15 मार्च, 2015 को प्रातः वैदिक साधन आश्रम तपोवन, देहरादून में गायत्री यज्ञ पूर्ण श्रद्धा व भक्ति के वातावरण में सम्पन्न हुआ। यज्ञ के ब्रह्मा श्री उत्तम मुनि थे तथा मंच की शोभा के रूप में देहरादून की एक महान आध्यात्मिक हस्ती स्वामी चित्तेश्वरानन्द सरस्वती विराजमान थी। यज्ञ के अनेक यजमानों में मुख्य यजमान आश्रम के यशस्वी प्रधान श्री दर्शन कुमार अग्निहोत्री दम्पती थे। तपोवन के वैदिक धर्म के निष्ठावान मंत्री यशस्वी श्री प्रेम प्रकाश शर्मा सहित बड़ी संख्या में लोग 3 वृहत कुण्डों में किए गये यज्ञ में सम्मलित थे।

यज्ञ के पश्चात मुख्य प्रवचन देते हुए आर्य जगत के प्रतिष्ठित संन्यासी व यज्ञप्रेमी स्वामी चित्तेश्वरानन्द सरस्वती ने श्रद्धालुओं को सम्बोधित किया। उन्होंने महर्षि दयानन्द का उल्लेख कर कहा कि जो यज्ञ नहीं करता वह पाप करता है। पाप अकारण किसी को दुःख देने को कहते हैं। अतः यज्ञ न करना पाप कैसे हो सकता है. इसका समाधान करते हुए उन्होंने कहा कि सभी मनुष्य श्वांस लेते हैं। अन्न, जल व दुग्धादि पदार्थों से भी आवश्यक हमारे लिए वायु है। प्रत्येक मनुष्य व प्राणी श्वांस लेता व छोड़ता है जिससे वायु प्रदूषित होती रहती है। यह ऐसा ही है कि जैसे हम पानी पीये फिर उसे उगल दें और उसे पुनः पीयें। ऐसा बार–बार करें। कुछ ऐसा ही वायु को श्वांस के रूप में लेना व छोड़ना और बार–बार इसी प्रकार करने से हम दूषित वायु को ही बार–बार श्वांस द्वारा लेते रहते हैं जो कि हमारे व अन्य प्राणियों के लिए हानिकारक होती है। उन्होंने कहा कि सभी मनुष्यों व प्राणियों का जीवन वायु पर निर्भर है। वायु जीवनदात्री है। वायु को शुद्ध करना व शुद्ध रखना आवश्यक है। वायु को शुद्ध रखने के लिए सभी गृहस्थियों को गोघृत व हवन सामग्री से कम से कम 32 आहुतियां प्रतिदिन देनी चाहियें। विद्वान संन्यासी ने कहा कि हवन करना पुण्य कर्म करना नहीं अपितु पाप कर्म से बचना है। अतः प्रत्येक व्यक्ति को यज्ञ अवश्य करना चाहिये। उन्होंने कहा कि हमारे वैज्ञानिकों के पास वायु को शुद्ध करने का कोई उपाय या तरीका नहीं है। उन्होंने यह भी कहा कि एक तोला गो घृत से एक टन वायु शुद्ध व पवित्र होती है। विद्वान वक्ता ने कहा कि यज्ञ श्रेष्ठ कार्य नहीं अपितु श्रेष्ठतम कार्य है।

स्वामी चित्तेश्वरानन्द सरस्वती ने कहा कि हम सब आत्मायें हैं और सत्य, चित्त, अजर, अमर व नित्य हैं। हमारी आत्मा अनुत्पन्न है, अग्नि इसे जला नहीं सकती तथा गोली लगने से भी आत्मा मरती नहीं है। परमात्मा ने माता के गर्भ में हमारे शरीर का निर्माण किया है। परमात्मा ही माता–पिता से हमारा सम्बन्ध बनाता है। आत्मा तो शुद्ध, बुद्ध, नित्य व पवित्र सत्ता है। स्वामीजी ने आगे कहा कि आत्मा के भोग व अपवर्ग के लिए ही जीवन व शरीर मिला

बच्चे माता–पिता के आचरण से सीखते हैं। इसलिए बच्चों के बिगाड़ में सबसे बड़े दोषी, उनके माता–पिता हैं।

है। उन्होंने कहा कि जब हमारा जन्म होता है तो हम किसी को नहीं जानते। हम जन्म के समय इस अनजान संसार में आते हैं। जिसे हम जानते हैं वह शरीर है आत्मा शरीर नहीं है। हमारा व अन्यों का शरीर मरने वाला है। आत्मा अर्थात् मैं अनामी हूं। स्वामी चित्तेश्वरानन्द मेरी आत्मा का नहीं अपितु मेरे शरीर का नाम है। यह आत्मा नित्य है। जब हम संसार से जाते हैं तो यहां से कुछ लेके नहीं जाते। उन्होंने कहा कि आत्मा व शरीर का विच्छेद ही मृत्यु है। मैंने अपना जीवन कैसे जिया है, यह महत्वपूर्ण है। विचार करके काम करने वाला जीवन सफल होता है। उन्होंने कहा की आत्मा व परमात्मा को जानना व ईश्वर को प्राप्त करना ही सफलता है। जीवन में सत्य व्यवहार को बढ़ाना है। परमात्मा हर पल हमारे साथ है। वह हमें देख रहा है। हमारे पास बैठा हुआ है। सब जगह ओत–प्रोत है वह परमात्मा। ईश्वर सर्वव्यापक है और कभी हमसे अलग नहीं होता। स्वामी जी ने कहा कि हम मोह के झमेले में पड़े हुए है। मृत्यु होने पर हमारे साथ कुछ नहीं जायेगा, सभी कुछ यहीं छूट जायेगा। हमारे साथ हमारा आत्मा और परिमार्जित अन्तःकरण जायेगा। मुक्ति के समय अन्तःकरण भी छूट जाता है। उन्होंने कहा कि हमें अपनी आत्मा को शुद्ध करना है।

स्वामी जी ने कहा कि मैं किसी का स्वामी नहीं हूं। भोग की भावना से मनुष्य बन्ध जाता है। उन्होंने कहा की भोग की भावना को हटाना ही साधना है। स्वामीजी ने कहा कि भोग की भावना को परिमार्जित करने के लिए ही हमें यह मनुष्य जीवन मिला है। यज्ञ, स्वाध्याय, चिन्तन व साधना में ही जीवन को संलग्न रखने वाले आर्य जगत के सम्मान्य संन्यासी स्वामी चित्तेश्वरानन्द ने कहा कि हम इस तपोवन का लाभ उठायें। यहां आकर रहें। यहां साधना करके लाभ उठायें। उन्होंने कहा कि हम अपने ज्ञान, धन, अनुभव व सुख–सुविधाओं को अन्यों में भी बांटे।

मानव कल्याण केन्द्र और द्रोणस्थली आर्ष कन्या गुरूकुल के संस्थापक श्री वेद प्रकाश गुप्ता ने अपने सम्बोधन में कहा कि संसार में एक मनुष्य की दूसरे मनुष्य से शकल––सूरत, बालों का रंग व आवाज नहीं मिलती। यह ईश्वरीय कार्य व रचना की विशेषता है। देहरादून के आर्य समाज के वयोवृद्ध विद्वान, 50 से अधिक पुस्तकों के लेखक और हिन्दी व पंजाबी के कवि श्री चमनलाल रामपाल ने कहा कि मनुष्य जीवन का लक्ष्य मुक्ति है। मुक्ति पर प्रकाश डालकर उन्होंने स्वरचित पंजाबी की दो कवितायें भी श्रोताओं को सुनाई। युवा प्राकृतिक चिकित्सक डा. विनोद कुमार शर्मा ने अपने सम्बोधन में कहा कि वैदिक साधन आश्रम तपोवन का वातावरण स्वर्ग के समान है। इस स्थान पर साधना की चर्चा करना अच्छा है। महान पुरूष कुछ कठोर व्रत लेकर उनका पालन करने से बनते हैं। उन्होंने कहा कि महान व्यक्ति बनने का रास्ता जिह्वा से होकर जाता है। जिह्वा को अपने वश में करना ही मुख्य साधना है। श्री विनोद कुमार शर्मा ने प्राकृतिक चिकित्सक महात्मा जगदीश्वरानन्द, पांचली, मेरठ से अपने सम्बन्धों की चर्चा की। उनके सान्निध्य में उनके द्वारा किये गये गायत्री पुनश्चरण पर उन्होंने प्रकाश डाला। उन्होंने कहा कि गायत्री मंत्र को अपने माथे पर लिख कर उसे अर्थ सहित पढ़ना होता है। इससे एकाग्रता बनती है। शरीर निष्चेष्ट व वश में हो जाता है। ऐसा

हमारे देश में पंजाबी, गुजराती, मराठी, बंगाली आदि लोग रहते हैं, भारतीय नहीं। इसलिए भारतीय बनें और देश को एक बनाकर रक्षा करें।

करने पर माथे में अनेक प्रकार की ज्योतियां भी दिखाई देती हैं और लोक लोकान्तर भी दिखाई देते हैं यह उनका अपना अनुभव है। उन्होंने कहा कि साधनाओ से मनुष्यों का जीवन फलीभूत होता है। उन्होंने श्रोताओं का आह्वान किया कि साधना से अपना जीवन निर्मल बनायें। विद्वान वक्ता ने कहा कि यदि हमारा स्वास्थ्य अच्छा होगा तो मन अच्छा होगा और यदि मन अच्छा होगा तो साधना अच्छी होगी और हमें लाभ होगा।

अपने उद्बोधन में द्रोणस्थली आर्ष कन्या गुरूकुल की आचार्या डा. अन्नपूर्णा ने कहा कि आत्मा का भोजन ज्ञान रूपी अमृत है। इसी से आत्मा बलवान होता है। सृष्टि के आरम्भ में परमात्मा ने ऋषियों को वेदों का ज्ञान दिया था। विदुषी वक्ता ने कहा कि जो गाने वालों का उद्धार करती है उसे गायत्री कहा जाता है। सविता बन्धनों से छुड़ा देने वाले को कहते हैं। सविता अनेक वेद मन्त्रों का देवता है जिसे सावित्री भी कहते हैं। गायत्री मन्त्र में स्तुति, प्रार्थना व उपासना तीनों ही हैं। मानव जीवन का अन्तिम लक्ष्य दुःखों व बन्धनों से छूटना है।

अपील

आपको विदित है कि वैदिक साधन आश्रम तपोवन नालापानी देहरादून वर्ष 1949–50 से योग साधना के माध्यम से महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के संदेश को देश के कोने–कोने में पहुंचाने के लिये प्रयत्नशील है। इस प्रयोजन हेतु वर्ष में कई बार योग शिविरों का आयोजन किया जाता है। जिसकी सूचना हम अपनी मासिक पत्रिका 'पवमान' के द्वारा आश्रम के प्रति श्रद्धावान सदस्यों तक पहुंचाते हैं। तपोवन आश्रम में 'तपोवन आरोग्यधाम' चिकित्सालय भवन तथा योग शिविरों के आयोजन हेतु महात्मा प्रभुआश्रित सत्संग भवन का निर्माण प्रारम्भ कर दिया गया है। दोनों भवनों का कवर्ड एरिया लगभग 13000 वर्गफिट है। अभी तक दोनों भवनों की छतें डाली जा चुकी हैं तथा इन भवनों के निर्माण पर लगीग 86 लाख रुपया व्यय हो चुका है। अब भवनों का प्लास्टर, फर्श, खिड़की दरवाजे, रंगाई, पुताई एवं फर्नीशिंग का कार्य शेष है। अवशेष कार्यों के लिये लगभग 70 लाख रुपये की तत्काल आवश्यकता है। आपके सात्विक दान से इन भवनो का निर्माण शीघ्र पूर्ण हो सकता है। दानराशि ओरियन्टल बैं ऑफ कामर्स, राजपुर रोड़ देहरादून (IFSC code : ORBCO100002) के खाता 'वैदिक साधन आश्रम' खाता सं. 00022010029560 में जमा करा सकते हैं। आश्रम को दिया गया दान इनकमटैक्स की धारा 80 जी के अन्तर्गत कर मुक्त है। दानराशि बैंक खाते में जमा करने के उपरान्त आश्रम कार्यालय के दूरभाष नं. 0135–2787001 पर सूचित करने पर दान की रसीद आपके पते पर भेज दी जायेगी।

गंभीर रोग में कम से कम तीन डॉक्टर्स की सलाह लें।
किसी भी कीमत पर शरीर को स्वस्थ रखें।

युवाओं हेतु
दिव्य जीवन निर्माण शिविर (आवासीय)

युवती वर्ग : 27 मई सांयकाल से 31 मई 2015 प्रातःकाल तक

युवक वर्ग : 6 जून सांयकाल से 10 जून 2015 प्रातःकाल तक

आयु सीमा : 15 वर्ष से 30 वर्ष तक

स्थान : वैदिक साधन आश्रम, तपोवन, नालापानी देहरादून

शिविर निर्देशक : आचार्य आशीष जी तपोवन आश्रम तथा सहयोगी शिक्षक वर्ग

विषय : Study Skills, पूर्ण व्यक्तित्व विकास, (Total personality development) स्मरण शक्ति तीव्र करने के उपाय, मनोनियंत्रण, सुखी जीवन के टिप्स, ध्यान (मेडीटेशन), आत्म सुरक्षा के उपाय (मार्शल आर्ट्स) एवं वैदिक सार्वजनीन सत्यसिद्धान्तों का परिचय, प्रश्नोत्तर एवं वीडियो शो आदि।

भाषा : **हिन्दी एवं अंग्रेजी**

नियम :
1. शिविर में पूर्णकाल अनुशासित रहना अनिवार्य है।
2. प्रतिभागी की जिम्मेदारी माता–पिता अथवा प्रेरक की होगी एवं उनकी लिखित स्वीकृति भी जमा करनी होगी।

शिविर शुल्क : इस ईश्वरीय कार्य में प्रत्येक प्रतिभागी एवं अभिभावक द्वारा भावनापूर्वक स्वैच्छिक सहयोग करना अनिवार्य है।

शिविर में स्थान सीमित होने के कार अपना स्थान यथाशीघ्र निम्नलिखित महानुभावों से सम्पर्क कर सुरक्षित करा लेवें।

1. **आचार्य आशीष जी देहरादून। मो. 09410506701**
   (समय–रात्रि 8 बजे से 9.15 बजे तक)
2. **श्री नन्दकिशोर अरोड़ा जी, दिल्ली। मो. 09310444170**
   (समय–प्रातः 10 से सांय 05 बजे तक)
3. **श्रीमती शालिनी शाह जी, देहरादून। मो. 9837019694**
   (समय–दोपहर 12 से सायं 07 बजे तक)

निवेदक :

दर्शन कुमार अग्निहोत्री
अध्यक्ष
मो. 9810033799

ई० प्रेम प्रकाश शर्मा
सचिव
मो. 9412051586

पुनर्नवा

पुनर्नवा, साटी या विषखपरा के नाम से विख्यात यह वनस्पति वर्षा–ऋतु में बहुतायत से पायी जाती है। शरीर की आन्तरिक एवं बाह्य सूजन को दूर करने के लिये यह अत्यन्त उपयोगी है।

यह तीन प्रकार की होती है– सफेद, लाल एवं काली। काली पुनर्नवा प्रायः देखने में नहीं आती। पुनर्नवा की सब्जी शोथ (सूजन)– नाशक, मूत्रल तथा स्वास्थ्यवर्द्धक है।

पुनर्नवा कड़वी, उष्ण, तीखी, कसैली, रूच्य, अग्निदीपक, रूक्ष, मधुर, खारी, सारक, मूत्रक, एवं हृदय के लिये लाभदायक है। यह पाण्डुरोग, विषदोष एवं शूलका भी नाश करती है।

पुनर्नवा–औषधीय प्रयोग

(1) **नेत्रों की फूली**– पुनर्नवा की जड़ को घी में घिसकर नेत्र में लगाने से लाभ होता है।

(2) **नेत्रों की खुजली (अक्षिकण्डू)**– पुनर्नवा की जड़ को शहद अथवा दूध में घिसकर आँजने से लाभ होता है।

(3) **नेत्रों से पानी गिरना (अक्षिकण्डू)**– पुनर्नवा की जड़ को शहद में घिसकर आँखों में लगाना लाभदायक है।

(4) **रतौंधी**– पुनर्नवा की जड़ को काँजी में घिसकर आँखों में आँजना लाभकारी है।

(5) **खूनी बवासीर**– पुनर्नवा के जड़ को हल्दी के काढ़े में देने से लाभ होता है।

(6) **पीलिया**–(Jaundice)–पुनर्नवा के पञ्चांग को शहद एवं मिस्त्री के साथ लें अथवा उसका रस या काढ़ा पियें।

(7) **मस्तक–रोग एवं ज्वर–रोग**– पुनर्नवा के पञ्चांग का 2 ग्राम चूर्ण, 10 ग्राम शहद में प्रातः सायं खाने से लाभ होता है।

(8) **जलोदर**– पुनर्नवा की जड़ के चूर्ण को शहद के साथ खाने से लाभ होता है।

(9) **सूजन**– पुनर्नवा की जड़ का काढ़ा पीने एवं सूजन पर लेप करने से लाभ होता है।

(10) **पथरी**– पुनर्नवा को दूध में उबाल कर सुबह–शाम पीना चाहिये।

(11) **विष**–(क) चूहे का विष– सफेद पुनर्नवा–मूलका 2–2 ग्राम चूर्ण आधे ग्राम शहद के साथ दिन में दो बार लेने से लाभ होता है।

(ख) पागल कुत्ते का विष–सफेद पुनर्नवा के मूल का रस 25 से 50 ग्राम घी में मिलाकर रोज पियें।

(12) **विद्रधि (फोड़ा)**– पुनर्नवा के मूल का काढ़ा पीने से कच्चा फोड़ा भी मिट जाता है।

(13) **अनिद्रा**– पुनर्नवा के मूल का पाथ 100 मिलीलीटर दिन में दो बार पीने से निद्रा अच्छी जाती है।

(14) **संधिवात**– पुनर्नवा के पत्तों की भाजी, सोंठ डालकर खाने से लाभ होता है।

(15) **विलम्बित प्रसव–मूढगर्भ**– थोड़ा तिलक तेल मिलाकर पुनर्नवा के मूल का रस, जननेन्द्रिय में लगाने से रूका हुआ बच्चा तुरंत बाहर आ जाता है।

(16) **गैस**– पुनर्नवा के मूलका चूर्ण 2 ग्राम

हींग आधा ग्राम तथा काला नमक एक ग्राम गरम पानी ले।

(17) मूत्रावरोध– पुनर्नवा 40 ग्राम मिलीलीटर रस अथवा उतना ही काढ़ा पियें। पेडू पर पुनर्नवा के पत्ते बफाकर बाँधे, 1 ग्राम पुनर्नवाक्षार गरम पानी के साथ पीने से तुरंत फायदा होता है।

(18) खूनी बवासीर– पुनर्नवा के मूल को पीसकर फीकी छाछ (200 मिलीलीटर) या बकरी के दूध (200 मिलीलीटर)–के साथ पियें।

(19) वृषण–शोथ– पुनर्नवा का मूल दूध में घिसकर लेप करने से वृषण की सूजन मिटती है।

(20) हृदयरोग– हृदय रोग के कारण सूजन हो जाय तो पुनर्नवा के मूल का 10 ग्राम चूर्ण और अर्जन के छाल का 10 ग्राम चूर्ण 200 मिलीलीटर पानी में काढ़ा बनाकर सुबह शाम पीना चाहिये।

(21) श्वास (दमा)– भोंरगमूल चूर्ण 10 ग्राम और पुनर्नवा चूर्ण 10 ग्राम को 200 मिलीलीटर पानी में उबाल कर काढ़ा बनायें। जब 50 ग्राम मिलीलीटर बचे तब उसमें आधा ग्राम श्रृंगभस्म डालकर सुबह–शाम पियें।

(22) रसायन प्रयोग– हमेशा स्वास्थ्य बनाये रखने के लिये रोज सुबह पुनर्नवा के मूल का या पत्ते का दो चम्मच (10 मिलीलीटर) रस पियें।

वैदिक साधन आश्रम तपोवन नालापानी देहरादून द्वारा आगामी महीनों में आयोजित कार्यक्रम

1. युवतियों के लिए दिव्य जीवन निर्माण शिविर (आयु 14 वर्ष से 30 वर्ष तक)	27 मई से 31 मई 2015 तक
2. युवकों के लिए दिव्य जीवन निर्माण शिविर (आयु 14 वर्ष से 30 वर्ष तक)	6 जून से 10 जून 2015 तक
3. आचार्य सत्यजीत जी (रोजड़) तपोभूमि में सांख्यदर्शन/न्यायदर्शन पढ़ायेंगे	15 जून से 19 जुलाई 2015 तक
4. आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य के मार्गदर्शन में आयोजित ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका उपासना विषय (संस्कृत भाग सहित) एवं आर्योद्देश्यरत्नमाला प्रशिक्षण शिविर	4 जुलाई से 12 जुलाई 2015 तक

सभी आर्य भाई–बहनों से विनम्र निवेदन है कि उपरोक्त कार्यक्रमों में उत्साहपूर्वक भाग लें विस्तृत जानकारी के लिए वैदिक साधन आश्रम तपोवन नालापानी, देहरादून से सम्पर्क करें

फूलों की सुगंध, उसी दिशा में जाती है, जिधर की हवा हो,
पर गुणी व्यक्ति के गुणों की सुगंध, चारों दिशाओं में फैलती है। गुणवान बनें।

आरोग्य का खजाना नीम

—डा० श्री बनवारीलाल यादव

नीम एक बहुत उपयोगी वृक्ष है। इसकी जड़ से लेकर फूल—पत्ती और फल तक सभी अवयव औषधीय गुणों से भरे पूरे हैं। भारतवर्ष के गरीब लोगों के लिये यह कल्पवृक्ष है। आईये, हम इसके गुणों को देखकर उनसे लाभ उठायें।

जड़—नीम की जड़ को पानी में उबालकर पीने से बुखार दूर होता है।

छाल—नीम की बाहरी छाल पानी में घिसकर फोड़े—फुंसियों पर लगाने से वे बहुत जल्दी ठीक होते हैं। बाहरी छाल को जलाकार उसकी राख में तुलसी के पत्तों का रस मिलाकर लगाने से दाद तथा अन्य चर्मरोग ठीक हो जाते हैं। छाल का काढ़ा बनाकर प्रतिदिन उससे स्नान करने से सूखी खुजली में लाभ होता है।

छाया में सूखी छाल की राख बनाकर, कपड़े से छान करके उसमें दो गुना पिसा हुआ सेंधा नमक मिला लें। रोज इस चूर्ण का मंजन करने से पायरिया में लाभ होता है, मुँह की बदबू, मसूढ़ों तथा दाँतों का दर्द दूर होता है। छाल का काढ़ा दोनों समय पीने से पुराना ज्वर भी ठीक हो जाता है।

दातौन— प्रतिदिन नीम की दातौन करने से मुँह की बदबू दूर होती है। दाँत और मसूढ़ों की सूजन के उपचार के लिये दातौन बहुत उपयोगी है।

पत्तियाँ— चैत्रमास में नीम की कोमल नयी कोंपलों को दस—पंद्रह दिन तब नित्य प्रातः काल चबाकर खाने से रक्त शुद्ध होता है, फोड़ा, फुंसी, नही निकलते और मलेरिया ज्वर नहीं आता है।

दिन में सूर्य—किरणों की उपस्थिति में नीम की पत्तियॉ ऑक्सीजन छोड़कर हवा शुद्ध करती है। इसलिये गर्मियों मे नीम के पेड़ की छाया में सोने से शीतलता मिलती है तथा शरीर नीरोग रहता है।

नीम की पत्तियों के चूर्ण में एक ग्राम अजवायन तथा गुड़ मिलाकर कुछ दिन तक निरन्तर पीने से पेट के कीड़े नष्ट हो जाते है। गाय भैंस के बच्चों के पेट के कीड़े होने पर नीम की पत्तियों को पीसकर छाछ तथा नमक में मिलाकर चार—पाँच दिन देने से कीड़े मरकर बाहर निकल जाते है और पेट साफ हो जाता है।

पत्तियाँ पानी में उबालकर घाव धोने से ठीक होता है। उसके जीवाणु मरते हैं, दुर्गन्ध कम हो जाती है तथा सूजन नही रहती। पत्तियों के उबले पानी से स्नान करने से त्वचा की बीमारियाँ दूर होती जाती है। नीम की पत्तियों को पीसकर फोड़े—फुंसी पर लगाने से आराम मिलता है।

नीम की पत्तियों का रस दो चम्मच, दो चम्मच शहद में मिलाकर (प्रातःकाल) लेने से पीलिया—रोग मे लाभ होता है। एक छोटा चम्मच नीम की पत्तियों का लेकर उसमें मिस्त्री मिलाकर पीने से पेचिश में लाभ होता है। प्रमेह में एक कप पानी में दो—तीन ग्राम पत्तियों को उबालकर काढ़ा बनाकर पीने से लाभ होता हैं। चेचक और खसरे के रोगियों को शीघ्र स्वस्थ करने के लिये नीम के पत्तों से हवा की जाती है।

पत्तियों के अन्य उपयोग—नीम की पत्तियों को संचित अनाज में मिलाकर रखने से उसमें घुन, ईली तथा खपरा आदि कीड़े नही लगते। गर्म और सिल्क के कपड़ों, गर्म रेशमी कालीन, कम्बल, पुस्तक, आदि को कसारी (कीड़ा)—से बचाने के लिये इनमें नीम की पत्तियाँ रखनी चाहिये। नीम की सूखी पत्तियों के धुएँ से मच्छर भाग जाते है।

नीम की पत्ती की खाद पेड़—पौधों को पोषक—तत्व प्रदान करती है तथा जमीन में

उपस्थित दीमक को भी समाप्त करती है। फसल को नुकसान पहुँचाने वाले अन्य कीटों को भी यह मारती है।

फूल—नीम के फूल तथा निबौलियाँ खाने से पेट के रोग नहीं होते। फूलों को जलाकर काजल के रूप में उपयोग में लाया जाता है।

निबौलियाँ—निबौली नीम का फल होता है। इससे तेल निकाला जाता है। यह भी कई प्रकार के रोगाणुओं को मार डालने में सक्षम है तथा आग से जले घाव बहुत शीघ भर जाते है। इसके तेल से नीम का साबुन बनाया जाता है। यह साबुन चर्मरोग, घाव तथा फोड़—फुंसियों के लिये बहुत लाभकारी है। तेल निकालने के बाद बची हुई खली का पौधों के लिये खाद के रूप में उपयोग किया जाता है। यह पौधों को बढ़िया खुराक प्रदान करता है। दीमक और फसल को नुकसान पहुँचाने वाले अन्य कीटों को भी यह मार डालता है। यह फफूँद को भी नष्ट करता है।

नीम मद या रस— कभी—कभी किसी पुराने नीम के वृक्ष के तने से नीम की गन्ध लिये एक तरल पदार्थ निकलता है, जिसे मद करते हैं। रूई की बत्ती बनाकर उसे मद में भिगोकर छाया में कई दिनों तक सुखाया जाता है। सूखने के बाद एक दीपक में रखकर दीपक जलाया जाता है। इसके ऊपर दूसरी मिट्टी की सिराही थोड़ी टेढ़ी—उलटी रखकर बत्ती को लौ से निकलने वाले कार्बन (धुएँ) को इस सिराही में जमने दिया जाता है। बाद में इस उलटी रखी सिराही से खुरचकर किसी डिब्बी में रख लिया जाता है। यह काजल नेत्रों में लगाने से नेत्रों की ज्योति सही रहती है। यह बहुत उपयोगी काजल है।

तना—नीम की लकड़ी में दीमक तथा घुन नहीं लगता, इसलिये इसके किवाड़ आदि लगवाने से दरवाजे, खिड़कियों में दीमक लगने का खतरा नही रहता।

सींक—नाक, कान, छिदवाने के तीन—चार सप्ताह बाद आभूषण पहनने से पहले नीम की सींक पहनने से जख्म जल्दी ठीक होता है और जीवाणु नही पड़तें।

फार्म—4

प्रकाशन	:	पवमान
प्रकाशन अवधि	:	मासिक
मुद्रक का नाम	:	प्रेम प्रकाश शर्मा
जिस स्थान पर मुद्रक का काम होता है उसका सही तथा ठीक विवरण	:	सरस्वती प्रेस, 2—ग्रीन पार्क, देहरादून
प्रकाशक का नाम	:	प्रेम प्रकाश शर्मा
क्या भारत का नागरिक है?	:	हाँ
प्रकाशक का पता	:	वैदिक साधन आश्रम, तपोवन, देहरादून
सम्पादक का नाम	:	कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री
क्या भारत का नागरिक है?	:	हाँ
सम्पादक का पता	:	166 ओल्ड नेहरू कॉलोनी, इलाहाबाद बैंक के पास देहरादून (उत्तराखण्ड)
उन व्यक्तियों के नाम, पते जो समाचार पत्र के स्वामी हों तथा जो समस्त पूँजी के एक प्रतिशत के हिस्सेदार हों।	:	वैदिक साधन आश्रम तपोवन, देहरादून

मैं कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री एतद्द्वारा घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिये गये विवरण सत्य हैं।

दिनांक : 15—03—2015

कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री
सम्पादक

प्रभु दर्शन

—महात्मा प्रभु आश्रित जी महाराज

ओ३म् विशं विशं मघवा पर्याशायत
जनानां धेना अवचाक शत् वृषा।
यस्याह शक्रः सवनेषु रणयति
स तीव्रैः सौमै सहते पृतन्यतः।

शब्दार्थ—(मधवा) परमैश्वर्यवान् ईश्वर, (विशं विशं) प्रत्येक मनुष्य में (परि+आशयत) लेटे हुए हैं, चुपके से व्यापे हुए है और (वृषा) वे सुखवर्षक ईश्वर (जनानां) सब मनुष्यों की (धेनोः) ज्ञान क्रियाओं को (अवचाक शत्) देख रहे हैं या प्रकाशित कर रहे हैं। (अह) परन्तु (शक्रः) ये सर्व—शक्तिमान् ईश्वर (यस्य) जिसके (सवनेशु) सवनों में, ज्ञान निष्पादनों में (रण्यति) रम जाते है, इन्हें स्वीकार कर लेते हैं (सः) वह पुरूश (तीव्रैः सोमैः) अपने इन तीव्र सोमों द्वारा, महाबली उच्च ज्ञानों द्वारा (पृतन्यतः) सब आक्रमणकारियों को, बड़े से बड़े हमलों को (सहते) सहता है, जीत लेता है।

व्याख्या—भक्त भगवान् के दर्शन चाहता है, व्यर्थ में उसे इधर—उधर ढूंढ़ने के लिए भटक रहा है। उस मृग की तरह जिसकी नाभि में कस्तूरी मौजूद है और उसकी गंध से वायु महक उठती है और सुगन्ध के पीछे—पीछे इस खोज में दौड़ता है कि कहाँ से सुगन्ध आ रही है, उसे यह मालूम नहीं कि गन्ध देने वाली चीज तो मेरे अन्दर मौजूद है। इस प्रकार भक्त भी उस प्रभु के दर्शनों के लिये बाहर भटकता है जबकि वह नारायण उसके अन्दर विराजमान है। वेद ने कहा है ''अन्यदृ युश्माकं अन्तरं बभूव'' (यजु0 17/31) वह और है, तुम से भिन्न है और तुम्हारे अन्दर है। ऋग्वेद के इस पवित्र मन्त्र में भी यही बतलाया है कि इन्द्र नारायण हर एक मनुष्य के हृदय कुटीर में आकर लेटे हुए हैं और सब में चुपके से लेटे हुए यह नारायण प्रत्येक मनुष्य की ज्ञान क्रियाओं को भी साक्षात् देख रहे हैं परन्तु ज्ञान तो बुद्धि में होता हैं चाहे वह ज्ञान प्रभु का हो या संसार का। तो बुद्धि दो प्रकार की होती। एक वह बुद्धि जो संसार का ज्ञान और दूसरी वह जो प्रभु का ज्ञान कराती है। ज्ञान तब होता है जब बुद्धि अर्पण हो जाती है। एक लड़का इंजीनियरिंग सीखना चाहता है। वह जब अपनी बुद्धि इंजीनियर के अर्पण कर देता है तब वह इंजीनियरिंग का काम सीख सकता है। इसी प्रकार जो डाक्टर बनना चाहता है उसे अपनी बुद्धि को डाक्टर के अर्पण करना पड़ता है तब डाक्टर बन सकता है।

बुद्धि अर्पण का फल

जब शिष्य अपनी बुद्धि गुरू के आधीन कर देता है अर्थात् अर्पण कर देता है तब वह ज्ञान ग्रहण करता है। परन्तु इंजीनियर और डाक्टर केवल मात्र अपनी सामर्थ्य से ज्ञान नहीं करा सकते, उन्हे यन्त्रों की और दवाईयों की जरूरत पड़ती है तभी वह शिष्य को ठीक—ठीक ज्ञान दे सकते हैं और शिष्य ज्ञान ग्रहण कर सकता है परन्तु परमेश्वर सर्वशक्ति सम्पन्न है। उसको ज्ञान कराने के लिये किसी यन्त्र आदि साधन

व्यक्ति की आयु निश्चित नहीं है। आयु बढ़ाने वाले कर्म करेंगे, तो आयु बढ़ेगी। बुरे कर्म करेंगे, तो आयु घट जाएगी।

की आवश्यकता नही। प्रभु का दर्शन जो मनुष्य करना चाहता है उसे अपनी बुद्धि प्रभु के अर्पण कर देनी चाहिये। जब मनुष्य अपनी बुद्धि प्रभु के अर्पण कर देता है तो परमेश्वर उसको सामर्थ्य प्रदान करता है वह सामर्थ्य क्या है ?

हम निस्सहाय पैदा हुए थे, उस समय मां के अर्पण थे। बच्चे ने जब माता के दूध का धारण किया तो उसके अन्दर बल आ गया। पृथ्वी माता से जब हमने अन्न, दूध, फल आदि को आमाशय में धारण किया तो शरीर के अन्दर बल आ गया। जिस प्रकार शरीर का उदर नाभि है, आमाश्य है, उसी प्रकार आत्मा का उदर हृदय है। आमाशय मे जो भोजन जाता है तो उस भोजन को नाभि समान रूप से पहुंचा देती है। इससे सारे शरीर को बल प्राप्त होता है। शरीर का भोजन अन्न है, आत्मा का भोजन ज्ञान। ज्ञानरूपी भोजन (अन्न) का जब हृदय में धारण कर लिया तो ज्ञान की प्राप्ति हो गई। ज्ञान परमेश्वर की निज सम्पत्ति–शक्ति है, सामर्थ्य है। ज्ञान की जब प्राप्ति हो गई, बल आ गया, सामर्थ्य आ गया।

प्रभु दर्शन कब देते है

प्रभु तो हर समय दर्शन देते है। वह प्रभु अनन्त गुणों वाले है। क्षण–क्षण में भिन्न–भिन्न गुणों के रूप में अपने आपको प्रकट करते रहते हैं। कभी दया के रूप में, कभी मित्र के रूप में। कभी गुरू बनकर, कभी बन्धु बनकर कभी माता कभी पिता बनकर दर्शन देते हैं।

मनुष्य आचरण से पहचाना जाता है। एक आदमी आंखे मूंदकर, आसन लगाकर बैठ गया। लोगों ने समझा योगी बैठा हुआ है। योगी के गुण उसके अन्दर हों या न हों, योगी का स्वभाव हो न हो और उसके गुण और स्वभाव को जानते भी न हों परन्तु उसने चूंकि योगी का रूप बना लिया, इसलिये हमने अनुमान कर लिया कि वह योगी है। एक व्यक्ति सेंध लगाता हुआ देखा गया, हमने उसे चोर समझ लिया, यह न देखा कि उसके अन्दर कोई और गुण भी है, हो सकता है वह बड़ा दानी हो, मधुरभाषी हो। हमने उसके आंतरिक गुणों को नही देखा। चोरी करते देखा और कह दिया कि चोर है। आंखो मूंद आसन लगाए देखा कह दिया कि योगी है। योगी के कर्म धारण करने से योगी प्रतीत होगा। चोर कर्म धारण करने से चोर दिखाई देने लगा। इस प्रकार जो प्रभु के कर्मो को धारण कर लेता है उसे प्रभु दर्शन देते है।

प्रभु के गुण और स्वभाव प्रभु के कर्म के रूप में आएंगे। भक्त वह नहीं जो कहे कि 'आ! दुख के मिटाने वाले आ! दर्शन दे दे, ओ दुख को मिटाने वालें!' परमेश्वर के गुण अनन्त है। भक्ति का प्रारम्भ यहां से होता है जब भक्त भगवान् को कर्मफलदाता के रूप में देखता है। दुःख पापकर्म का फल है, जब दुःख आता है तब पाप कट रहें हैं। मान लो मैंने एक हजार रूपया किसी का देना है, ऋणदाता मेरे द्वार पर आकर मांग करता है–मैं कहता हूॅ मेरे पास धन नहीं, बाल बच्चे हैं, मुश्किल से पेट पलता है आप को कहाँ से दूं। वह धरना मारकर बैठ जाता है। कहता है–मै तो कुछ न कुछ लेकर ही उठूंगा। मजबूर होकर मैंने पांच रूपये दे दिये, बुरा भी मनाया परन्तु बाद में मैंने धन्यवाद किया कि हजार में से पांच तो कम हो गये। इसी प्रकार भक्त पर जब दुःख आता है तो भक्त दर्द को दर्द के रूप नही देखता वह उसे प्रभु की देन समझता है और प्रसन्न होता है कि भगवान् भी दाता है, देता ही रहता है, लेता कुछ नही। भक्त प्रभु के गुण, कर्म और स्वभाव को धारण कर ले तो वह दिव्य कोटि का देवता बन सकता है और फिर देता ही रहता है मांगता नही। हम लेकर भी नही देते, वह देकर नही मांगते। एक देकर लेता नही, दूसरा लेकर देता नही। कितना अन्तर है।

कष्ट तीन प्रकार के है

(1) शारीरिक (2) आर्थिक (3) आत्मिक।

(1) शरीर को जब कोई दुःख दर्द हो, उसे प्रभु की देन समझें और समझें कि प्रभु कर्मफलदाता के रूप में दर्शन दे देकर उसको वह दान प्रदान कर रहे है, और जब सुख मिले तो भगवान् सुखस्वरूप बनकर उसे सुख प्रदान करने आए हैं, इससे अधिक उसे क्या पता।

(2) आर्थिक कष्ट जब आए, तब सन्तोष करो। अर्थ से जो सुख पैदा होता है, उसके अभाव को देखकर अपने से छोटे को देखें। महल में न रहा, झोंपड़ी में रहा, फल न खाया गाजरें खा लीं, सब्जी न खाई नमक मिर्च से खा ली। उसने दिया था, उसी ने ले लिया चिंता काहे की। जो दिन चढ़ा है अधिक से अधिक चौदह घंटे रहेगा, ऐसे अपने कष्ट को चाहे हंस के गुजारे, चाहे रोके, उसने तो गुजर जाना है। चिंता से अपने आपकों कमजोर ने करें, रोगी न बनावें, प्रभु के चिंतन में सन्तोष करें, और फिर अपने से छोटे को देखें। धन नहीं शरीर तो कायम है, शरीर से धन कमाया जावेगा। अपने से बड़ों को देखकर उनसे प्रीति करो। ईर्ष्या नहीं रहेगी।

शेख सादी फारसी भाषा के एक प्रसिद्ध कवि हो गुजरे हैं, बड़े सन्त और शील स्वभाव थे। एक बार हज्ज को जा रहे थे, पावों में जूता न था, गर्मी का मौसम था। धूप चमक रही थी, रेत गर्म हो रही थी। गर्म रेत पर जब पांव पड़ता जलन होती, दुःखी होकर कहने लगे, 'ओ खुदा! (भगवान) तुझे शर्म नही आती कि मेरे पांव जल रहे है, एक जूता भी तू न दे सका, तेरी क्या सखावत है? कैसे तू दाता कहलाता है? ऐसे ऐसे अपशब्दो से भगवान को कोस रहा था, इतने में क्या देखा कि एक लंगड़ा व्यक्ति जिसके दोनों पांव लुंज है, घुटने टेक–टेक कर उस तपी हुई रेती से गुजर रहा है। शेख साहिब देखकर बहुत शरमाए और कहने लगे, 'भगवान्!' क्षमा करो मैं अत्यन्त लज्जित हूं, तू महान् कर्मफलदाता है तेरा कोटिशः मै धन्यवाद करता हूँ। तूने मुझे इस लुंजे से बहुत अच्छी स्थिति में रखा यदि मुझे ही ऐसा बना देता, तो मै तेरा क्या कर सकता था, क्षमा करो, बार–बार क्षमा प्रार्थी हूं।' थोड़ी दूर चला ही था कि आगे एक सज्जन जूता लेकर खड़ा था, कहा कि शेख साहिब! आप के पांव नंगे हैं, यह जूता आपके लिये है। सादी ने लज्जा से सिर नीचे कर लिया और कहा कि 'भगवान्! स्चमुच तुझे अपने भक्त प्यारे हैं, तू कष्ट निवारक है। भक्तों के कष्ट निवारने के लिये क्या–क्या रूप धारण करता है।'

(3) आत्मिक कष्ट–आत्मिक कष्ट अज्ञान से प्राप्त होता है। ज्ञान प्राप्त करने के लिये भावुक हृदय चाहिये। बात सुनी झंट उस पर अमल कर दिया, परन्तु भावुक हृदय में तीन कारणों से दोष आ जाता है।

(1) जब बुद्धि शंकित हो जावे।

(2) जब बुद्धि अभिमानी हो जावे।

(3) जब बुद्धि दब्ध हो जावे।

(1) बुद्धि शंकित हो जाती है– जब काम तो शुरू कर दिया परन्तु बाद में शंका उत्पन्न हो गई कि सफलता होगी कि नहीं, विधि ठीक है कि नहीं, भाव कमजोर पड़ गया, काम छोड़ दिया।

(2) बुद्धि अभिमानी हो जावे, तो थोड़ी सी सफलता को देखकर, अथवा थोड़ा सा ज्ञान प्राप्त करने पर गुण के आ जाने पर अभिमान हो जाता है तो काम रह जाता है।

(3) बुद्धि दब्ध होती है जब मनुष्य के अन्दर अपने विचारों को प्रकट करने का साहस नही रहता, मुझे क्या, अपने आप जाने, यह कह कर चुप हो गया, विचार न किया काम छोड़ गया।

भगवान करे कि हम इन अवगुणों को अपने से दूर कर सकें और गुणों को ग्रहण करते हुए जीवन सफल कर सकें।

मार्च 2015 में वैदिक साधन आश्रम तपोवन को दान देने वाले में दानदाताओं की सूची

क्र.स.	नाम	स्थान	धनराशि
1.	श्री कृष्ण गोपाल जी	दिल्ली	2100=00
2.	श्री बी०बी० जौहरी जी	दिल्ली	40000=00
3.	अग्निहोत्री धर्मार्थ ट्रस्ट	दिल्ली	60000=00
4.	श्री नन्द किशोर अरोड़ा जी	दिल्ली	750=00
5.	श्री जुगल किशोर कन्सल	पंचकुला	1200=00
6.	निखिल अग्रवाल चैरिटेबल ट्रस्ट	–	51000=00
7.	श्री महावीर प्रसाद	सहारनपुर	500=00
8.	श्रीमती भावना मलिक	मुम्बई	1200=00
9.	सर्व कल्याण धर्मार्थ न्यास	पानीपत	15000=00
10.	श्री श्याम सुन्दर सोनी	गुड़गांव	12000=00
11.	श्री श्याम सुन्दर सोनी एवं श्रीमती सुदेश सोनी	गुड़गांव	5100=00
12.	ऋषिवस्त्र व्यापार प्रा० लि०	नई दिल्ली	100000=00
13.	ब्रह्म धर्मार्थ ट्रस्ट	दिल्ली	50000=00
14.	जन कल्याण ट्रस्ट	दिल्ली	50000=00
15.	यज्ञ भगवान ट्रस्ट	दिल्ली	40000=00
16.	दर्शन कुमार एण्ड सन्स	दिल्ली	90000=00
17.	गणेश अग्निहोत्री फैमिली ट्रस्ट	दिल्ली	40000=00
18.	श्रीमती रीतु रानी शर्मा	सोनीपत	11000=00
19.	श्री विकास (कैमिस्ट)	दिल्ली	51000=00
20.	श्री ओम प्रकाश हंस	दिल्ली	3100=00
21.	श्री शशी सेठ C/o श्री सीताराम कालड़ा	दिल्ली	2000=00
22.	कु० रश्मि मदान	नई दिल्ली	10000=00
23.	श्रीमती प्रगति कुमार	दिल्ली	21000=00
24.	डिलाईट नावल्टीज C/o श्री वेद मिगलानी जी	दिल्ली	11000=00
25.	श्री विनीश आहुजा जी	दिल्ली	2000=00
26.	श्री दर्शन कुमार अग्निहोत्री जी	दिल्ली	5000=00
27.	श्रीमती इन्द्रा आहुजा	दिल्ली	6500=00
28.	श्री धीरेन्द्र मोहन	देहरादून	500=00
29.	श्री वेद मिगलानी जी	दिल्ली	2000=00
30.	श्री ओमप्रकाश हंस	–	501=00
31.	श्री प्रेम बजाज व श्रीमती सन्तोष बजाज	–	4000=00
32.	श्री मनमोहन कुमार जी	देहरादून	500=00
33.	श्री प्रेमप्रकाश शर्मा जी	देहरादून	2000=00
34.	माता सुरेन्द्र अरोड़ा जी	देहरादून	5000=00
35.	श्री रवि खेड़ा जी	जनकपुरी, दिल्ली	11000=00
36.	श्री नितिन रामावत जी	अमृतसर	500=00
37.	श्री आशीष गुप्ता (सी०ए०)	देहरादून	20000=00
38.	श्री धर्मसिंह शास्त्री जी	गुड़गांव	5100=00

वैदिक साधन आश्रम तपोवन देहरादून सभी दानदाताओं का धन्यवाद करता है।

Saturn Series

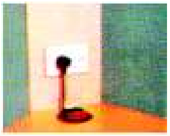

CPU Holder Slide out Keyboard tray Swivel and Tiltable keyboard tray Wire Management

All dimensions are subject to change without any prior notice because of continuous research & development. All designs shown here are proprietary. Any infringement is liable for prosecution.

DE BONO FLEXCOM (INDIA) LTD.: Kukreja House, 1st Floor, 46, Rani Jhanshi Road, New Delhi-110055
Ph : 011-23540721. 23533936 Fax : 23533944 Email : debono@debonoindia.com

डाक पंजीयन UA/DO/DDN/75/2015-17 समाचार पत्र पंजीयन 51900/88

MUNJAL SHOWA मुंजाल शोवा

मुंजाल शोवा लिमिटेड देश में टू व्हीलर / फोर व्हीलर उद्योग में सभी प्रमुख ओ.ई.एम. के लिए शॉक एब्जोर्बर, फ्रंट फोर्क्स, स्ट्रट्स (गैस चार्जड और कंवेंशनल) और गैस स्प्रिंगो का सबसे बड़ा निर्माता है। निर्मित उत्पाद, गुणवत्ता और सुरक्षा के कड़े मानों के अनुरूप होते हैं। कम्पनी के उत्पाद बाधामुक्त, आरामदेह, चिरस्थायी, विश्वसनीय और सुरक्षित यात्रा के लिए जाने जाते हैं। मुंजाल शोवा लिमिटेड, टीएस–16949, आईएसओ 14001, ओ.एच.एस.ए.एस. 18001 और टीपीएम प्रमाणित कम्पनी है। मुंजाल शोवा लिमिटेड का शोवा कार्पोरेशन जापान के साथ तकनीकी और वित्तीय सहयोग करार है।

Vhih,e çekf.kr dEiuh

vkbZ,lvk@Vh,l&16949&2002 çekf.kr

vkbZ,lvk&14001 ,oa vks,p,l,,l&18001 çekf.kr

gekjs [;kfrçkIr xzkgd

- ghjks eksVksdkWi fyfeVsM
- ek#rh lqtqdh bafM;k fyfeVsM
- gkUMk dkjl bafM;k fyfeVsM
- gkUMk eksVj lkbdy ,oa LdwVj bafM;k ¼çk0½ fyfeVsM
- bafM;k ;kegk eksVj ¼çk0½ fyfeVsM

gekjk mRiknu

- LVªV l@xSl LVªVl
- 'kkWd ,CtkWcZlZ
- ÝaV QkdZl
- xSl fLçax l@foUMks cSyUlLl

eqatky 'kkssok fyfeVsM

IykV u0 9&11] ek#fr bUMLVªhvy ,fj;k] xqMxkWoA nwjHkk"k% 0124&2341001] 4783000] 4783100
IykV u0 26 b ,oa ,Q] lsDVj&3] ekusljj] xqMxkWoA nwjHkk"k% 0124&4783000] 4783100
IykV u0 1] bUMLVªhvy ikdZ&2] lkyseiqj xkao] egnn&gfj}kj] mÙkjk[k.M nwjHkk"k% 0124&4783000] 4783100

ofnd lk/ku vkJe lkslkbVh dh fy, çdk'kd eqæd çe çdk'k }kjk ljLorh çsl] 2] xhu ikdZ] fujatuiqj] ngjknu&248001 ¼mÙkjk[k.M½ ls eqfær ,oa ofnd lk/ku vkJe lkslkbVh ¼jftLVªh-½] ukykikuh] ngjknu ¼mÙkjk[k.M½ ls çdkf'krA lEiknd& d".kdkUr ofnd 'kkL=h